मतवालों की होली



सम्पादक
कर्मेन्दु शिशिर



प्रकाशक : परिमल प्रकाशन
17, एम० आई० जी०, बाघम्बरी आवास योजना
अल्लापुर, इलाहाबाद—211 006

मुद्रक : भार्गव मुद्रण केन्द्र
4/3, बाई का बाग, इलाहाबाद—211 003

आवरण . इम्पैक्ट क्रियेटिव सर्विसेज
सिविल लाइन्स, इलाहाबाद—211 001

संस्करण : प्रथम, 1990 ईसवी

मूल्य : पचास रुपये



परिमल प्रकाशन
१७, एम० आई० जी०, बाघम्बरी आवास योजना
अल्लापुर, इलाहाबाद-२११ ००६ फोन : ५२७७१

बाबा नागार्जुन के पांवों पर

गुलाल सहित

सादर

प्रगतिशील साहित्य का निर्माण हवा में नहीं हो सकता, न यों किसी देश में उसका निर्माण हुआ है। हममें प्रगतिशील साहित्य रचने की कितनी चाह है, इसकी एक बहुत बड़ी कसौटी यह भी है कि अपने पिछले साहित्य की जनवादी परम्परा को हमने किस हद तक परखा और अपनाया है और उसे आगे बढ़ाया है।

—डॉ० रामविलास शर्मा

रचना-विवरणी

□□

दो शब्द

भारत के निकटतम अतीत में नवजागरण का सांस्कृतिक आंदोलन संभवतः सर्वाधिक महत्वपूर्ण और गंभीर घटना रही। यह केवल ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध भारतीय जनता के संघर्ष का ही नहीं, बल्कि भारत की सांस्कृतिक अस्मिता की अभिव्यक्ति और उसकी गरिमा के स्थापन यत्न का भी आंदोलन था। रचनात्मक और संभावनाशील परंपरा की सुरक्षा के साथ अपेक्षित आधुनिकता के वरण की बहुविध कोशिश ही नवजागरण का मूल स्वर था—जिसके लिए अपनाये गये तरीके हमें आज भी रोमांचित और चकित करते हैं।

'मतवाला' हिन्दी नवजागरण का एक अनोखा पत्र था। हिन्दी की व्यंग्य-पत्रकारिता में इसका प्रकाशन एक ऐतिहासिक घटना सिद्ध हुई। इसका पहला अंक 26 अगस्त, 1923 ई० में प्रकाशित हुआ और लगभग छः वर्षों तक नियमित निकलता रहा। अंतिम दिनों में यह कलकत्ता से उठकर मिर्जापुर आया और कुछ ही दिनों बाद बंद हो गया। बाद में मिर्जापुर से उग्रजी और जयपुर से इन्दु वाचस्पति ने भी कुछ अंक प्रकाशित किये लेकिन वह बात वापस न हुई। 'मतवाला' की सबसे बड़ी भेंट—सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' थे। इस कविद्रष्टा को जब कोई पहचानने वाला न था और न ही उनके नाज सहलाने की समझ थी—तब 'मतवाला' ने इस ऐतिहासिक गौरव का वरण किया। महादेवप्रसाद सेठ, मुंशी नवजादिकलाल श्रीवास्तव और शिवपूजन सहाय ने उनकी प्रतिभा की न सिर्फ पहचान की बल्कि अपने ललाट का तिलक बनाया। उम्र में सभी से छोटे होने के बावजूद सभी ने सरस्वती-

पुत्र को ऊँचा सम्मान और निर्दोष नेह दिया। 'मतवाला' और निराला लगभग पर्याय रहे।

'मतवाला' की महत्वपूर्ण सामग्री-चयन का कार्य मैंने किया—जिसकी एक कड़ी 'मतवाला की होली' आपके हाथों में है। इसमें 'मतवाला' के होली-विशेषांको तथा इसी की तर्कसंगति में कुछ अन्य चयनित सामग्री संकलित है। अपने मन-मिजाज मे 'मतवाला' का जैसा तेवर था – उसमें होली-विशेषांको का निःसंदेह अतिरिक्त महत्त्व है। अपने विचारो को कारगर तरीके से जनता के बीच ले जाने के लिए इसके लेखक इस आत्मीय पर्व का अपूर्व कौशल से इस्तेमाल कर रहे थे—जो निश्चय ही सच्चे जनवादी लेखन के सर्वोत्तम नमूने हैं। जनता से उसकी सांस्कृतिक भाषा में ही सकर्मक संवाद संभव है। पराधीन देश की जनता के लिए उल्लास और उमंग से भरे इस पर्व की अभिव्यक्ति एक कठिन त्रासदी ही रही होगी। उल्लास और पीड़ा की अभिव्यक्ति के इस दोहरे दायित्व को 'मतवाला' ने किस कौशल से व्यक्त किया—इसका अनुभव इन रचनाओ के स्पर्श से सहज संभव है।

यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि होली के ऐसे इस्तेमाल की परंपरा का सूत्रपात 'मतवाला' ने नही बल्कि भारतेन्दु और उनके युग के उपेक्षित लेकिन अत्यन्त महत्वपूर्ण लेखकों पं० बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र और राधाचरण गोस्वामी ने किया था। इस कड़ी में बालमुकुंद गुप्त का नाम भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है—जिनके जोगीड़े और चिट्ठे में इस तरीके का आदर्श रूप मूर्त हुआ है। यह अकारण नही कि डॉ० रामविलास शर्मा ने 'मतवाला' को द्विवेदी युग से न जोड़कर, भारतेन्दु युग की अगली कड़ी के रूप मे रेखांकित किया है। तथ्य और तरीके दोनो दृष्टियों से उनकी स्थापना इन रचनाओं से पुष्ट और प्रमाणित होती है।

'मतवाला' सनसनीखेज पत्र तो नही था, लेकिन अपने विशिष्ट तेवर के कारण उसका प्रभाव लगभग ऐसा ही पड़ा। पहले अंक के साथ ही 'धूम मच गई।' इसका मन-मिजाज इतना विलक्षण था कि पूरा हिन्दी संसार चकित रह गया। तमाम प्रतिष्ठित पत्रिकाओं, संपादकों, लेखकों और पाठकों ने इसे हाथों-हाथ लिया। इसकी अनेक बानगी, छपी प्रतिक्रियाओं मे देखी जा सकती है। स्वाधीनता-संग्राम के उस तप्त दौर मे हिन्दी ही नही, तमाम देशी पत्रकारिता अपने शिखर पर थी। उस समय बंगाल की राजधानी कलकत्ता मे तमाम दिग्गज रचनाकार थे—वहाँ बिना सुविधा और अनुभव के ऐसे शानदार पत्र को निकाल लेना और धाक जमा लेना—ठट्ठा नही था। लेकिन

जीवन भरे ताकतवर हिन्दी लेखकों ने अपनी सारी ताकत झोंककर स्वाधीनता के स्वर को ऊँचा किया।

'मतवाला' अपनी तमाम कमजोरियों के बावजूद तब के समाज में सार्थक हस्तक्षेप था, क्योंकि उसने राजनीति, साहित्य, धर्म, समाज, संस्कृति—हर पक्ष को समेटा। उनकी गहरी पड़ताल की। इसके बावजूद 'मतवाला' के अपने अंतर्विरोध रहे। कहीं-कहीं वैचारिक पिछड़ापन भी दिखाई पड़ा तो हल्कापन भी। हिन्दुत्व के प्रति झुकाव भी रहा मगर उसकी नीयत असंदिग्ध थी। निराला और शिवपूजन सहाय के अलग होने पर उसका संतुलन और बिगड़ा और उग्र के वर्चस्व के साथ वह पूरी तरह बदल गया। उसमें उन तमाम तत्कालीन शक्तियों की गहरी छाप थी, जो स्वाधीनता आंदोलन के साथ इस देश में चल रही थी। अनेक संप्रदायों के संगठन और विचारधाराओं के दल पूरे उफान में थे और अधिकांश देशभक्त ताकतें इनके बीच सार्थक सक्रियता प्रमाणित कर रही थी। उनके नकार या स्वीकार के अनुपात की समझ या परख का 'मतवाला' में अभाव भी था, लेकिन इसे हम भी, आज देख रहे हैं जो शायद तब संभव न था। अंतिम दौर में साम्प्रदायिकता के आरोप में सेठ महादेवप्रसाद जेल भी गये थे और अश्लीलता तथा हल्केपन के आरोप भी दूर तक वाजिब थे। इससे इंकार नहीं।

फिर भी, 'मतवाला' की मार नि.संदेह बड़ी गहरी थी। उसके व्यंग्य में जातीयता का गाढ़ा लेप था। उसकी धार विलक्षण थी। अपने अनोखेपन से उसने व्यंग्य की ऊँची मिसाल कायम की। व्यंग्य के पीछे की दृष्टि में राष्ट्र, समाज और नैतिक मूल्यों के प्रति गहरी आस्था थी। उसने तमाम पक्षों पर चतुर्दिक चोट की। उसकी निर्भीकता ने एकबारगी सभी को आकृष्ट किया। उसकी नजर अंतर्राष्ट्रीय से स्थानीय घटनाओं तक में झांकती और सही जगह पर माकूल प्रहार करती। घटनाओं के चयन और उसे भेदने की जैसी अचूक कला दिखाई पड़ती है—उसमें कुछ भी छूटने या बख्शने की गुंजाइश न थी। चोट और चुहल की घटा बेमिसाल थी।

'मतवाला' में देशभक्ति की अभिव्यक्ति दलगत नहीं थी। मोटे तौर पर उसके विचार मूल तिलक के विचारों से जुड़े थे। इसके क्रांतिकारी विचारों में काफी उभार मिलता है। साम्यवादियों के प्रबल पक्षधर और देशभक्त क्रांतिकारियों के मुखर समर्थक के रूप में 'मतवाला' का यश स्थायी है। गरमपंथी राजनेताओं के अतिरिक्त जिस व्यक्ति की आलोचना 'मतवाला' में नहीं है—वे हैं—महात्मा गाँधी। पंडित नेहरू तक पर विरोध के छींटे हैं—

मगर गाँधी पर एकदम नही। क्रांतिकारियों के प्रति 'मतवाला' का मुखर झुकाव था। अन्य नेतागण, जो कांग्रेस और स्वराज्य दल के जगमगाते नक्षत्र रहे 'मतवाला' की मार से नही बच पाये।

'मतवाला' की सूझ मे कट्टर देशभक्ति की केन्द्रीयता थी तो बनारसी मन का हुलास भी था। कुछ सीमित अपवादों को छोड़ दिया जाय तो उसकी तमाम शरारतो मे एक सास्कृतिक संस्कार था। उसका बनारसी ठस्सा ऐसा था— मानो कलकत्ते में काशी बस गई हो। वह समय, हिन्दी की धरोहर उपलब्धियो में शुमार रहा। इसकी आत्मीय छवि इस संकलन में दिखाई पड़े— तो मेरा श्रम सार्थक हो। इस प्रकाशन के लिए मैं आदरणीय शिवकुमार सहाय और भाई अशोक त्रिपाठी के प्रति विनीत कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।—

—कर्मेन्दु शिशिर

अग्रलेख—1

फोटो लेकर चाटो !

होली खेली थी क्रोधान्ध भीम ने मुक्तकुन्तला द्रौपदी के साथ—कुरुक्षेत्र में—दु:शासन के रक्त से ! होली खेली थी आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र ने युधिष्ठिर की यज्ञशाला में—जहाँ छिन्नमस्तक शिशुपाल की धमनियाँ पिचकारियाँ बनी थीं उष्ण रक्त की ! होली खेली थी रणधीर वीर राम ने लंका में राक्षसराज रावण के साथ—जहाँ रक्ताक्त राम का श्याम शरीर यों शोभता था मानों नील कमल पर बीरबधूटियाँ बैठी हों—रणोन्मत्त रावण 'रण-रंग' में इतना सराबोर था कि 'कज्जल-गिरि से गेरु के पनारे' बहते थे—उस होली के हुल्लड़बाज़ भी आपादमस्तक रक्ताभिषिक्त होकर 'कुसुमित किंशुक तरु' की तरह शोभा पाते थे।

हाँ, जी भर कर होली खेली थी तेजस्वी मनस्वी तपोधन परशुधर राम ने !—मेदिनी रक्तरंजित हो उठी थी !—दिशाएँ लाल हो गई थीं !—नक्षत्र-मण्डल भी लोहित हो उठा था ! किंतु, होली का सबसे सुन्दर स्वाँग रचा था भगवान् नरसिंह देव ने !—जिनका विलक्षण विकराल रूप अहंकारी हिरण्य-कशिपु के हृदय-रक्त से सिक्त था !—जिसके गले में उस मदान्ध अन्यायी की अँतड़ियों की माला थी !—जिनके तीक्ष्णतर नखों की अग्निज्वाला अत्याचारी के वक्षस्थल के रक्तकुण्ड में शान्त हुई थी !

फिर होली हुई थी—दनादन पिचकारियाँ चली थीं—'राजस्थान' का एक-एक पवित्र रज-कण रक्त-सिक्त हो गया था ! उस होली में एक ओर थी स्वतंत्रता की लालसा और दूसरी ओर था अधिकार का अहंकार ! खूब होली मची थी ! लालसा-ललना के दिव्य वस्त्र रक्त-रंग से सराबोर हो गये थे ! वैसी रंग-भरी होली क्या गुलामों की आँखें कभी देख सकती हैं ? हरगिज़ नहीं !

रंगीली होली की बातें जाने दो। होलिकादहन भी तुमने कहाँ देखा ?—सत्याग्रही प्रह्लाद ने हँसते-हँसते देखा था—भयंकर अग्नि की लाल लपटें भी चंदन की चैलियाँ बन गई थीं !—अत्याचार की प्रलयाग्नि भी मन्दाकिनी की धारा बन गई थी ! फिर होली जलाई थी हनुमान ने लंका गढ़ में—त्राहि-त्राहि की पुकार से आकाश काँप उठा था ! हाँ ! उस साल, समस्त भारत में होली जलाई थी महात्मा गाँधी ने विदेशी वस्त्रों की—लंकाशायर में हाहाकार

मच गया था !––मैंचेस्टर के पेट में आग लग गई थी ! याद है ? नहीं ? तो फिर तुम्हें असली होली कहाँ मिलेगी ? यों ही टापते रहो।

दूर क्यों जाते हो ? तुम्हारे देश में––समाज में––साहित्य में––सर्वत्र होली जल रही है। जरा आँखें गड़ाकर ग़ौर से देखो। देश में भारतीयों का स्वत्व प्रह्लाद बना है, नौकरशाही 'होलिका' बनी है। समाज मे बाल-विधवाएँ अपनी लालसाओं की होली जला रही हैं। साहित्य में सुविचारों की होली जलाई जा रही है ! क्या साहित्य में अब ऐसी होली देखने को नहीं मिलेगी ? ––क्या हम 'भिखारियों' और 'दासों' को कविवर 'भिखारीदास' का यह होली-वर्णन सुहावना लग सकता है ?––

'काढ़ि कै निसंक पैठि जात दण्ड मुण्डन मे
लोगन को देखि 'दास' आनंद पगति है।
दौरि दौरि जेहि तेहि लाल करि डारति है
अंक लागि कण्ठ लगिबे को उमगति है।
चमक - दमकवारी ठमक - जमकवारी
रमक - तमकवारी जाहि रे जगति है।
राम ! असि रावरी की रन में नरन में
निलज्ज बनिता सी होरी खेलनि लगति है ॥'

ऐसी रंगदार होली का जमाना जाता रहा ! 'बीती ताही बिसारि कै, आगे की सुधि लेहु !' अब प्रेम की पिचकारियों से काम लो, मुख पर गौरव का गुलाल मलो, सामाजिक कुप्रथाओं की होली जलाओ, खादी की सादी पोशाक पर अमल अनुराग का अबीर छिड़को, आपस की फूट की धूल उड़ाओ, कायरता पर कीच उछालो, ऊँच-नीच का भेद मिटाओ, राष्ट्रीयता का राग अलापो, मादक वस्तुओं का मुँह काला करो, विदेशी वस्तुओं को जूतियों के हार पहनाओ और गुलामी को गधे पर चढ़ाओ।

बस ! वही होली का समयानुकूल स्वाँग होगा, वही होली वास्तविक आनन्द की अठखेलियों से भरी होगी, वही होली भारत के समस्त रोगों की दवा होगी, उसी होली के दिन इस दरिद्र भारत के घर-घर में चकाचक पूए की कड़ाहियाँ गरगरायेंगी, उसी होली के दिन भारत की शुष्कप्राय जातीयता की जड़ मे संजीवन-सलिल की धारा पहुँचेगी, उसी होली के दिन शान्ति और स्वराज में परस्पर रंग-फाग मचेगा। यदि उस होली के दर्शनार्थ तुम्हारी आँखें उत्सुक नही है––हृदय उद्विग्न नहीं है––मस्तिष्क अशान्त नही है––प्राण व्याकुल नही है, तो वही अपने बाबा के गीत गा-गा कर उसी पुरानी होली का फोटो लेकर चाटते रहो !

[वर्ष 1, संख्या 30––15 मार्च, 1924]

□□

अग्रलेख—2

पिचकारी मत पकड़ो

चलने दो दनादन ! धार मोटी है तो क्या; धार पर डटे रहो; पीछे पैर न दो; छाती खोलकर सामने अड़ जाओ। यही तुम्हारी अग्नि-परीक्षा का समय है। याद करो; यह होली उस अग्नि-परीक्षा का स्मारक दिन है, जो एक दृढ़ सत्याग्रही का अस्तित्व मिटाने के लिये हुई थी। एक ओर था भीषण अत्याचार, दूसरी ओर था सत्य संकल्प ! एक ओर चमचमाती हुई तलवार, दूसरी ओर था सत्य पर बलि होने की धधकती हुई आकांक्षा ! एक ओर भयंकर ज्वालाएँ, दूसरी ओर भक्ति गद्गद अश्रु धाराएँ ! एक ओर प्रलयंकारी निष्ठुरता; दूसरी ओर अटल व्रत-निष्ठा। एक ओर प्रचण्ड क्रोध का ज्वाला-मुखी, दूसरी ओर एकान्त ईश्वर-विश्वास की मन्दाकिनी। बड़ी विकट अग्नि-परीक्षा थी।

उसी अग्नि-परीक्षा में सफल होने वाले दृढ़व्रती की याद दिलाने के लिये, आज होली आई है। याद करो उस दृढ़ता को, उस निर्भीकता को, उस सच्ची लगन को और उस आस्था को, जिसके सहारे वह सत्याग्रही विजयी हुआ था। विजय के उन्हीं साधनों के साथ तुम्हें आज आगे बढ़ना चाहिये। उसी सत्याग्रही का आदर्श, तुम्हें दनादन चलनेवाली पिचकारी की चोटीली धार के सामने हिमालय की तरह अचल बने रहने की शक्ति प्रदान करेगा। [हतोत्साह होने का कोई कारण नहीं। हिचकने का कोई हीला नही। काले और गोरे के भेद से सकुचाने की जरूरत नही। व्रजमण्डल में तो एक ओर 'काला' अकेला ही था, दूसरी ओर गोरियों का गुट चारों तरफ से उस पर पिचकारियाँ चलाता था। वह हँसते ही हँसते पिचकारियो की धारो को चीरता हुआ गोरियों के गुट में घुस पड़ता था। फिर तो भगदड मच जाती थी। सारी पिचकारियो का मुँह वह एक ही 'पम्प-हजारा' बन्द कर देता था।]

तुम उसी काले के उपासक हो। उसी की तरह पिचकारी की धार पर डटना सीखो। आज देश में गोरी सरकार दमन की पिचकारी दनादन चला रही है। होली की धमार की तरह चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है।

उड़ते हुए अबीर-गुलाल के बादल की तरह विपत्तियों के बादल सिर पर मँडला रहे हैं। यही अवसर है तुम्हारी पुरुषत्व परीक्षा का। यह कसौटी है तुम्हारे पुरुषत्व कंचन का। अतएव, उल्लास के साथ शान्त भाव से हँसते-हँसते, मत्तगजेन्द्र-गति से, आगे बढ़ो; मैदान तुम्हारे हाथ है, विजयश्री तुम्हारे साथ है।

किन्तु आगे बढ़ते हुए यह याद रखो, पिचकारी की धारें चाहे तुम्हें बे-पनाह कर दें, चाहे त्राहि-त्राहि पुकारने को बाध्य कर दें, चाहे एँड़ी से चुटिया तक सराबोर कर दें, तिल भर न डिगो। आखिर पिचकारी चलाने वाले की शक्ति की भी कोई हद है। दुःशासन के भुजदण्ड चीर का छोर पाने से पहले ही शिथिल हो गये थे। यह दमन की पिचकारी भी उसी दशा को प्राप्त होगी। विश्वास रखो द्रौपदी दुकूल वर्द्धक पर। चलने दो धुँआधार! पिचकारी मत पकड़ो।

[वर्ष 2, अंक 29—7, मार्च 1925]

□□

होली कब खेलोगे ?

श्वेत साड़ी पहने कब से खड़ी हूँ, तुम्हारा पता ही नही है। आओ प्यारे, इस श्वेत साड़ी को पिचकारियों की मार से—अबीरी रंग की बौछार से—सराबोर कर दो—लाल कर दो, जब तक नही आओगे—आकर धुँआधार होली नही खेलोगे—तब तक यह श्वेत साड़ी मेरे शरीर से कोरे क़फ़न की तरह लिपटी रहेगी। इधर देखो, अबीरी रंग के मटके भरे रखें है, पिचकारियाँ तुम्हारी बाट जोह रही है—दूर ही से तुम्हे देखकर रंग की धार छोड़ेंगी। जरा आओ तो, तुम हाथ ओढ़ते ही रहोगे, मैं दनादन पिचकारी की धार से तुम्हें बेकरार कर दूँगी। भला कहो तो, कितने दिन हो गये, अब आते हो, तब आते हो, राह देखते-देखते आँखें पथरा गई—उधर पिचकारी के अन्दर रंग खौल रहा है, इधर कलेजे के अन्दर हौसला तड़प रहा है। इस बार तुम मिलो तो, श्यामवर्ण शरीर को रक्तवर्ण न कर डालूँ तो फिर नाम क्या ?

सच कहती हूँ, तुम्हारी तरह होली खेलने वाला कही देखने में नहीं आता। न जाने तुम होली के कितने स्वाँग धारण करना जानते हो। तुम्हारे होली खेलते समय के कितने ही स्वाँग आज भी मेरी आँखों के सामने नाच रहे हैं। दया कर इस समय उनमें से कोई एक स्वाँग भी तो दिखाओ। वह स्वाँग मुझे आज तक याद है—तुम्हारे हाथ न पिचकारी, न कुमकुमा; ग्वाल-बाल की टोली लिये टूट पड़ते थे—बाज की तरह—गोरियों पर। अब आज जरा इस गोरी पर तो टूटो—बड़ी देर से पिचकारी भर कर ललकार रही है। क्या कुंज की ओट से छापा मारना भूल गये ? कम से कम इस श्वेत साड़ी पर अपने रतनारे लोचनों का रंग तो छिड़को, इस श्वेत साड़ी का हौसला तो पूरा करो। तुम्हारे लिये यह कुछ कठिन तो नहीं है। तुम तो अकेले ही गोरियों के झुण्ड में बैठकर होली खेलनेवाले हो। निकट आओ मैदान में, कहीं यहीं पर छिपे तो जरूर होगे, अवसर की ताक में कब तक तरसाओगे ?

तुम्हारा वह स्वाँग तो भुलाये नही भूलता—तुम चुपचाप बागडोर थामे हुए थे, चारो से लोग तुम पर बौछारें कर रहे थे—पीताम्बर से रंग टपक रहा था—मोतीमाला लाल हो गई थी—श्याम कान्ति पर लोहित वर्ण की आभा !

—ओह ! विचित्र ही छटा थी। तुम्हारे इशारे पर लाखों होली-खेलवैया नाचते थे। क्या उन सिद्धहस्त खेलाड़ियों का जमघट फिर न जुटाओगे ?

अरे तुम्हारा वह स्वांग भी क्या कम था—आँखें लाल थीं—दाँत लाल थे—नख लाल थे ! दोनों जघों पर 'रंग का मटका' लिये बैठे थे, और मस्ती में इतने चूर थे कि भर-भर अंजलि रंग अपने आप ही उँड़ेल रहे थे। वह मस्ती क्या हो गई ? एक बार तो उसकी झलक दिखाओ। जी करता है, तुम किसी तरफ से भरी पिचकारी लिये आते हुए देख पड़ते, और मैं तुम्हारी पिचकारी की धार से अपनी पिचकारी की धार लड़ाने के लिये ललक कर आगे बढ़ती, तुम मेरी श्वेत साड़ी सराबोर कर देते, मैं कृतार्थ हो जाती। आश्चर्य है कि तुम एक पिचकारी देखकर भी ललकार पर नहीं डटते। वह उमंग आखिर क्या हुई, जिसके बल तुम दस-दस पिचकारियों का जवाब अकेले देते थे—बीस-बीस भुजाएँ भी पिचकारी चलाकर तुम्हारे दम को तोड़ नहीं सकती थीं, बताओ तो, फिर वैसी होली कब खेलोगे ?

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

चन्द्र खिलौना

ठहरो, ठहरो, व्यर्थ बहको मत! जरा होश सँभालो! इस प्रकार सुध-बुध खोकर उन्मत्त होने से काम नही चलेगा। क्या कहते है? होली आ गई। क्या सचमुच होली आ गई? तो फिर वह है कहां? हम तो आँखें फाड़-फाड़ कर देख रहे हैं और वह कहीं दिखाई नहीं पड़ती। स्वयं उसका दिखाई पड़ना तो दूर, हमें तो उसके आगमन की सूचना देने वाले चिह्न भी दिखाई नहीं पड़ते। यह जो पाँच पंचों की दान दी हुई लकड़ियों को जला कर होली मनाते हो और प्राचीन अभ्यासवश कल की पुतली की भाँति—देश और जाति के बदरंग रहते हुए भी—विलायती बुकनी घोलकर रंग खेल लेते हो—असली होली नही है? यदि वास्तव में तुम इतने ही को होली समझते हो तो, बलिहारी है तुम्हारी सहृदयता की।

होली ऋतुराज वसंत की अग्रदूती है। इसी के द्वारा ऋतुराज के उन्मादकारी आगमन का सन्देश पाकर तो प्रकृति महारानी बाग-बाग हो जाती है? और इसी आगमन-संदेश को पाकर तो वसुन्धरा का अंचल विविध भाँति के शस्यों से परिपूर्ण होकर अपूर्व शोभा धारण करता है! तो फिर कहाँ है प्रकृति की वह रोग-शोक सन्तापहारी श्री समृद्धि और वह मुक्तहस्त उदारता जो छोटे-बड़े शूद्र-द्विज और दरिद्र-धनवान—सबको बिना किसी प्रकार के भेद-भाव के, सब प्रकार की सुख-शान्ति प्रदान करती थी? कहाँ है वसन्त महाराज के आगमन का वह प्राणोन्मादकारी प्रभाव जिसमें विभोर होकर हम चाण्डाल को भी अपना भाई समझते और उसे सप्रेम गले लगाकर होलिकोत्सव मनाते थे? जरा आँखें खोलो और देखो। आज न तो इस अभागे देश में शस्य की ही इतनी प्रचुरता है कि बेचारा कृषक तुम्हारे इस होली के स्वांग मे दिल खोलकर योग दे सके, और न, हममें इस समय इतनी उदारता ही है कि हम ऊँच-नीच का भेदभाव भूलकर हिन्दू मात्र को प्रेम-गदगद होकर आलिंगन कर सकें। इस समय तो महाकवि बिहारी के शब्दों में—

भो यह ऐसोई समै जहाँ सुखद दुख देत,
चैत चाँद की चाँदनी, डारति किए अचेत।

का ही दृश्य नजर आ रहा है। ऐसी स्थिति में हमें न तो होलिकोत्सव मनाना ही समीचीन प्रतीत होता है और न ऋतुराज का स्वागत करना ही।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि तुम कई अपने को भूलकर इस दुर्दिन में भी होली मना ही लोगे और इतने ही के लिए गर्व से 'बचे सो खेले फाग' कहते हुए अपने को धन्य समझोगे, क्योंकि 'लँगोटी में फाग' खेलने का असाध्य रोग तुम्हारी पैतृक-सम्पत्ति हो गई है। परन्तु संसार तुम्हारी इस हृदयहीन बेहयाई को देखकर तुम्हें उस अज्ञान बालक के समान ही समझेगा जो चन्द्रमा की मनो-मुग्धकारी छटा को देखकर 'चन्द्र खिलौना लेइहौं' कहता हुआ रोता है और जल भरे थाल में चन्द्र-प्रतिबिम्ब को देखकर समझता है कि उसने चन्द्रमा पा लिया और चुप हो जाता है। अतएव, यदि तुम्हें अपनी प्राचीन परिपाटी के अनुसार होलिकोत्सव मनाने की अभिलाषा हो तो, इस साम्य-तत्त्व के प्रचारक जातीय त्योहार के अवसर पर अछूत कहलाने वाले भाइयों के प्रति अपने मनोभाव को सबसे पहले बदल दो। और अवनति काल में उत्पन्न हुए विषमता और घृणा के भाव की होली जलाकर, परस्पर प्रेम और सहानुभूति का गुलाल मलकर अपनी जाति को अपने शत्रुओं की दृष्टि में बचाओ।

[वर्ष 4, संख्या 40—12 मार्च, 1927]

□□

अग्रलेख—5

होली होगी

खूब होगी ! अच्छी तरह होगी ! देख लेना ! कहे देता हूँ । गाँठ दे रक्खो । बड़ी जबरदस्त और घमासान होली मचेगी । सारे संसार के इतिहासकार एक स्वर से कह उठेंगे—उफ ! ऐसी होली तो 'न भूतो न भविष्यति ।'

शायद तुम्हें तो वही होली याद होगी, जिसकी धूम कालिन्दी-कूल के कदम्ब-कुंजों में मची थी—जबकि ब्रजमण्डल का चन्द्रिका-चर्चित आकाश-मण्डल देव दर्शकों के विमान बेड़ों से भरा रहता था—छः-छः महीने तक राका रजनी ठगी रह जाती थी—अनवरत पुष्पवृष्टि से ब्रज वसुन्धरा सुशोभित हो उठती थी—झाँझ, मृदंग की मधुरध्वनि से वायुमण्डल परिपूर्ण हो जाता था—श्याम सलिल-वाहिनी यमुना भी रक्तवर्ण होकर अपने सौभाग्य पर इठलाती हुई बहा करती थी—शीतल मन्द सुगन्ध समीर भी अभ्रक-अबीर-कुमकुमे के रंगीन पराग से रंजित होकर कुंज-कुटीरों के तीर-तीर डोलती फिरती थी ।

किन्तु, शंकर की समाधि भग्न करने वाली वह होली—ब्रह्मा की तपस्या भुला देने वाली वह होली—इन्द्रासन के जमे हुए जल्से को उखाड़नेवाली वह होली—मालूम है, कब हुई थी ?

वह उस समय हुई थी, जब भारत में घी, दूध की नदियाँ बहती थी—जब भारतीय वीरों का प्रबल आतंक सारे भूमण्डल पर स्थापित था—जब भारत की विजय-वैजयन्ती नभोमण्डल में सगर्व उड्डीयमान होकर भगवान् सहस्रांशु के रथ की गति को भी रोके रहती थी ।

किन्तु आज ? क्या दशा है ? करोड़ों भारतवासी मुश्किल से एक जून सत्तू घोलकर गुजर करते है—भारत माँ के करोड़ो मासूम बच्चों को दाने-दाने के लाले पड़ रहे हैं—दुर्भिक्षों और महामारियों की भरमार से भारतीय प्रजा त्रस्त हो उठी है—रोगाक्रांत, 'क्षुधा-पीड़ित एवं दारिद्र्य-दलित प्राण-शेष नर-कंकालों से भारत-भूमि के प्रत्येक खण्ड का इंच-इंच छा गया है । कहो, ऐसी दशा में होली होगी ? बोलो—होगी, ऐसी दशा में ? हो सकती है ऐसी भीषण परिस्थिति में ?

आह ! भले ही न हो सके आज, किन्तु होगी अवश्य, अनति दूर भविष्य में ही होगी, और बड़े मजे की होगी—सचमुच कहता हूँ—सच्ची होली होगी—ऐसी-वैसी नहीं। वह सर्वथा अद्वितीय होगी। संसार का इतिहास पलट जायेगा। पृथ्वी असंख्य बार प्रकम्पित होकर तो कहीं स्थिर हो पायेगी। अनन्तसागर महीनों क्षुब्ध हिलोलों से मथित होकर अशान्त हो उठेगा। सूर्य और चन्द्रमा आँखें फाड़-फाड़ कर विस्मय के साथ देखते रह जायेंगे। भयंकर उल्का-पात की अविश्रान्त धारा से समस्त जगद् कम्पायमान हो जायेगा। हवा थरथराती फिरेगी, पेड़-पत्ते स्तब्ध हो रहेंगे, पक्षी अपने बसेरे छोड़ भागेंगे, *भैरवी के प्रलय-हुंकार से दसों दिशाएँ काँप जायेंगी और भीमाकृति रणचण्डी* के अट्टहास से आकाश विदीर्ण हो जायेगा।

हा : हा . हा : हा · हा. ! ! ! कैसी अच्छी होली होगी यह ? कल्पना तो करो ? नाच उठोगे मतवाला-पाठको ! सम्हलकर सोचो—कितनी विचित्र होली होगी वह ! हा : हा · हा . हा : हा: !! ! उस दिन भारतवासियों के शरीर की नाड़ियाँ अदम्य पिचकारियाँ बनेंगी लाल रंग की ! उन देव-विमानों की जगह आकाश में गीध मँडरायेंगे। उस दिन भारतीय नर-नारियों की चिताभस्म राशि पर धुलहंडी मचेगी। उस दिन अभ्रक-बिन्दु के बदले देश-भक्ति की मस्ती में झूमने वाले अकलात नवयुवक वीरों के तेजस्वी नेत्रों से राष्ट्रप्रेम की चिनगारियाँ वायुमण्डल मे उड़ती फिरेंगी। उस दिन कुमकुमे के *बदले भारत के अनमोल लालों की बोटियाँ उड़ाई जायेंगी।* उस दिन साम्राज्यवाद के पलीते से उकसाई हुई तोपें ही भारत की जनमण्डली में प्रचण्ड मृदंग ध्वनि की तरह घहरायेंगी। उस दिन भारतीयों के हाथ-पैर की बेड़ियों की झनकार ही झांझ का मजा देगी। उस दिन करताल की जगह करवाल ले लेगी और गुलाल की जगह गोलियाँ।

आह ! कैसा अद्भुत दृश्य होगा भगवन् ! निहत्थे भारतीयों की लोथों से पटी हुई पृथ्वी पर साम्राज्यवाद की अधिष्ठात्री शक्तिचण्डी का वह उल्लास-पूर्ण अन्तिम ताण्डव नृत्य कैसा सुन्दर होगा प्रभो ! मेरे प्यारे इष्टदेव—बोलते क्यों नहीं ? मेरे आराध्यदेव संहार-मूर्ति शंकर ! कहो, उस दिन तो तुम्हारे तीसरे नेत्र के खुले बिना ही तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हो जावेगा। तुम तो सहज ही अखण्ड ताण्डव-नृत्य मे निमग्न हो जाओगे—तुम्हारे सहेला-सहेली भारतीयों की मुण्डमालाएँ पहनकर—खप्परों मे भर-भर उनके तप्त रक्त को पी-पीकर, युगों के बाद, तृप्ति लाभ करेंगे। बताओ तो, उस दिन के बाद !

हाँ, वास्तव मे उसी दिन के बाद—ठीक उसी दिन के बाद भारत—यही भारत—यही पद दलित भारत, अपने श्मशान से, उस प्रह्लाद की फूफी—उस

सत्याग्रही की निठुर-निगोड़ी बुआ—की चिताभस्म, अपने ललाट में लगाकर अभूतपूर्व आनन्द की मस्ती में झूम-झूम कर गावेगा—

अब होगी—
अब होगी हमारी होली !
सच्ची होली, प्यारी होली !
गाओ, बजाओ धूम मचाओ !
यारो ! होली होगी ! होली होगी !!

[वर्ष 5, संख्या 29—3 मार्च, 1928]

□□

मतवाले की बहक

इन्तहाये नशा में आता है होश।
होशियारी इन्तहाये नशा है ॥

1. 'मतवाला' की संगदिल माशूका 'माधुरु' ने ऐन होली के अवसर पर दगा दिया ! क्या पूछते हो यार, जमाना पलट गया ! सारा नशा किरकिरा हो गया !! हौसिला पस्त हो गया और सारी उमंग खाक में मिल गई !!! अब होली क्या तुम्हारे सर से खेलें या अपने ?, उफ कम्बख्त ने बड़ा धोखा दिया ! लिखा था यों कि 'फमलेगुल में छूटे आशियाँ अपना !'

2. अबकी होली की धूम कौंसिलों में खूब है ! मालवीयजी रंग छोड़ने के लिये जब पिचकारी उठाते हैं तब सर मलकम हेली उनकी पिचकारी ही पकड़ लेते हैं !

3. यार, ये मजूरदल वाले भी बड़े चकमेबाज निकले, 'स्वराज्य पार्टी' की घुड़कियों से जरा भी नहीं डरे ! अब 'पार्टी' को किसी नये नखरे का अभ्यास करना चाहिये। नहीं तो यदि प्रियतम यों ही रूठ गये तो होली का मजा ही बिगड़ जायेगा।

4. नौकरशाही ने न्याय की गर्दन तो पहले ही मरोड डाली थी, अब लज्जा को भी तिलांजलि देने वाली है ! एसेम्बली ने उसका बजट बिगाड डाला ! इसलिये या तो वह स्वराज दल के आगे सीधी हो जायेगी या नंगी नाचेगी।

5. सुनते हैं महात्माजी का स्वास्थ्य बहुत कुछ सुधर गया है, इसलिये उनके दर्शन के लिये भक्तों को टूट पड़ना चाहिये। नहीं तो, पूर्ण स्वास्थ्य लाभ कर लेने पर वे बड़ी आफत मचायेंगे। सत्याग्रह कर लेंगे, विलायती 'पटों' की होली जलायेंगे, चरखा चलवायेंगे, मलमल का मुँह मलकर खद्दर की हलचल मचायेंगे। गर्ज़ कि भारत में 'वही रफ्तार बेढंगी जो पहले थी' उसे फिर जारी करायेंगे। इसलिये उनको कुछ दिन और बीमार रखने की कोशिश करना, जरूरी ही नहीं, अज़हद जरूरी है !

6. अब तुर्की में खुदा की खुदाई न रहेगी क्योंकि उनके प्रतिनिधि को

अंगोरा एसेम्बली ने स्विटजरलैण्ड भेज दिया। अब अल्लाह मियाँ वहाँ से अपना उपनिवेश उठा लें।

7. मि० दास, श्रीयुत लालाजी और हकीम साहब ने तर्क का तूफ़ान बरपा कर दिया, युक्तियों का जाल बुन डाला और दलीलों का दरिया बहा दिया। परन्तु महात्मा के असहयोग सिद्धात का एक केश भी न हिला ! 'न टरै पग मेरुहुँ ते गरु भो, सु मनो महि संग बिरंची रचा !'

8. अरे ओ, मुहर्रमी सूरतवाले खब्बीसो, दक़ियानूसो और आबनूसो ! जरा इस होली के मौक़े पर तो हँसो ! यों न हँसी आती हो तो 'स्वराज पार्टी' की अक्ल पर हँसो, नौकरशाही की अदूरदर्शिता पर हँसो, 'मतवाला' के नवकालो पर हँसो, और परिहास के बदले ग़लीज़ वमन करने वाले सम्पादकों और लेखकों की दशा पर हँसो ! तुम्हे तुम्हारे बाप की क़सम, एक दफे जरूर हँस पड़ो !

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

9. लोग कहते हैं—होली आई ! हम कहते हैं—होली गई ! पूछिये, कहाँ ? क्यों नहीं, कोई बुलाने वाला भी तो हो ! उड़ा ले जाने वाला जितना चालाक था, बुलाने वाला अगर उसका भी चचा हो, तो आना क्या मुश्किल है ? सुबह-शाम मे आ सकती है। मगर वही मेकराजी चाल ! क्या वह चाल महात्मा गांधी नहीं चल सकते ? लोग तो उन्हें लक्ष्य कर कहा करते हैं कि 'भतीजों' को 'चचा' अच्छे मिले हैं ! बेशक 'चचा' तो ऐसे अच्छे मिले हैं कि 'भतीजे' अपने बाप का जमाना भी भूल गए !

10. सरकारी नौकरियाँ सूखी हड्डियाँ हैं। हिन्दू और मुसलमान 'निटिव डॉग' हैं। चबा रहे हैं चाव से और चख रहे हैं अपने ही मुँह के रक्त का स्वाद ! फिर भी तारीफ़ में कहते जा रहे हैं कि 'ऊख में पियूख में मयूख में न पाई जात, जैसी मधुराई सूखे हाड़ के चबाने में !'

[वर्ष 2, संख्या 29—7 मार्च, 1925]

11. थोड़ा-सा गुलाल, भूत-भावन भगवान् शंकर के प्रलयंकर चरणो पर, जिनमें चंचलता आते ही अनन्त ब्रह्माण्ड आपस में एक दूसरे से धक्के लेने लगते हैं, ज्वालामुखियों का समूह अपनी छाती के अग्नि-स्फुलिंगो से आकाश को आग-आग करने लगता है, समुद्र सूख जाते हैं, पृथ्वी पर हाहाकार उपस्थित हो जाता है !

12. थोड़ा-सा गुलाल, जगज्जननी, मंगलमयी, मुण्ड-मालिनी, महाशक्ति, माता महिष-मर्दिनी के चरणों पर, जिनके नीचे लोट कर भाव-मुग्ध भूतेश्वर भी अपने भाग्यों को सराहते हैं !

13. लगवा लो, लेखनी के लाडलो ! थोड़ा-सा गुलाल तुम भी अपने गोरे, काले, मटमैले, चितकबरे चेहरों पर मस्त होकर मलवा लो ! साथ ही, लगवाते वक्त, एक बार अपने आपको भूलकर मुग्ध होकर हँस भी लो ! आज 'फागुन मस्त महीने की होरी' है !

14. निर्मला, 'भक्ति-शिरोमणा, भठिहारिणी 'भीरुप्रिये' 'मनोरमा' ! देखो, चोंचले न बघारो, दूर ही से नजारे न मारो, जरा पास आ रहो और मुझे जी खोलकर लगा लेने दो थोड़ा-सा गुलाल अपने 'फुटबाल' की तरह फूले गालों पर ! सुकुमारी हो तो क्या, कुमारी हो तो क्या, निर्मतारी हो क्या, आज 'ऐसा करा लेने से' कोई कुछ न कहेगा। यह तो रस्मे दुनिया भी है, मौका भी है, दस्तूर भी है।

15. थोड़ा-सा गुलाल महाकवि 'शंकर' जी के भाल पर, थोड़ा-सा गुलाल कवि सम्राट पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्यायजी की दीर्घ-दाढ़ी पर, थोड़ा-सा गुलाल प्रेमचन्दजी की प्रतिमा पर, थोड़ा-सा गुलाल कविवर मैथिलीशरण की सुन्दर कविता पर और थोड़ा-सा गुलाल 'नारी-रूप-धारी-नर' ठाकुर गोपाल शरण सिंहजी की घनाक्षरी पर भी छिड़के देते हैं। इन्हीं महानुभावों की, वक्ते-जरूरत उदारता से 'देने' की आदत से ही, हम पियक्कड़ों के प्यालों की लाली है !

16. थोड़ा-सा गुलाल 'मतवाला'-मण्डल के सहृदय सखा पण्डित चन्द्र-शेखर पाठक की लम्बी-लम्बी तावदार मूँछों पर, जिनकी कृपा से हमारा 'अफजल-वध' सचित्र हो गया है।

[वर्ष 4, संख्या 40—12 मार्च, 1927]

17. आज भारतीय प्रजा के प्रतिनिधियों की नस-नस में फगुनहट ने मस्ती भर दी है। वे बड़ी उमंग से, साइमन-सतभैयों के साथ, स्वोच-पिचकारियाँ तान-तान कर होली खेल रहे हैं। हाय ! मैं मर्दुआ किसके साथ होली खेलूँ ? 'मदरइंडिया' प्रसव करने वाली 'मिस मेयो' बीबी तो लौट गईं अमेरिका ! हाय रे ! हाय रे ! उनके रहते एक भी होली नहीं कटी। कहीं आज वह होती ! आह ! कैसा रंग गँठता ! या अल्ला !!

18. 'निराला' महाराज ने पिचकारी तानी 'पंत' महारानी पर, तो वह बसंती चुनरी समेटकर अंदर ही अंदर ऐंठती हुई फूल सेज की पाटी पकड़कर चुप बैठ गई। यह 'निष्क्रिय-प्रतिरोध' (Passive Resistance) तो बड़े मजे का रहा ! लाख छेड़ो—बोलूंगी नहीं। अगर घूंघट टारोगे तो सिर्फ मुस्कुराऊंगी। अरे वाह री तेरी अदा ! तभी तो फिदा है सारा जमाना !

[वर्ष 5, संख्या 29—3 मार्च, 1928]

□□

चलती चक्की

[पम्पदार हज़ारा पिककारा]

कह रहा है आसमाँ यह सब समाँ कुछ भी नहीं।
पीस दूँगा एक गर्दिश में जहाँ कुछ भी नहीं॥

1. गत सप्ताह से श्रद्धेय गणेशशंकरजी 'प्रताप' - सम्पादक की कुर्सी पर बैठ गये। मालूम होता है, 'विद्यार्थीजी' फागुन की हवा लगते ही फिर ससुराल जाने की तैयारी करने लगे।

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

2. गत 26 फरवरी को कलकत्ता कार्पोरेशन ने स्थानीय शिव लेन के एक मन्दिर से एक साथ ही तीन शिवलिंग उखड़वा लिया और मंदिर भी तुड़वा डाला। मुसलमान भाई तो हिन्दू बालकों की ही सुन्नत किया करते थे, कार्पोरेशन ने तो हिन्दू देवताओं की भी सुन्नत आरंभ कर दी।

3. हिन्दी-संसार मे पत्रो की बाढ़ देखकर 'माधुरी' बीबी बहुत घबरा उठी हैं। जानेमन ! सुथना सँभाले रहो। पत्रो की बाढ़ गोमती की बाढ़ थोड़े है ? पत्रों की स्वयंवर-सभा मे तुम्हें भटकने न दूँगा ! बन्दाराम तो तुम्हारे 'पेटेण्ट' पति मौजूद ही हैं। घबराती क्यों हो ?

[वर्ष 2, संख्या 29—7 मार्च, 1925]

□□

रंगरूटों की फौज

1. काशी के पंडित रामप्रसाद पाण्डेय 'विशालरद' होली के दिन 'मतवाला' की टक्कर का 'भाण्ड' नामक एक पत्र निकालेंगे। अब वे अपने नाम के अन्त में 'पाण्डेय' के बदले 'भाण्डेय' लिखेंगे, क्योंकि 'भाण्डस्यायं सम्पादक: इति भाण्डेय: !' ठीक है—'तस्य तदेव हि मधुरं यमस्य मनो यत्र संलग्नम्' !

2. जबलपुर की 'श्रीशारदा' का मासिक बिगड़ गया ! एक साल में अनेक-पतिगामिनी होने का फल इसके सिवा और हो ही क्या सकता है ?

3. सुनते हैं कविता-कामिनी-कान्त पं० नाथूराम शंकर शर्मा को मतवाला-माधुरी की जोड़ी बहुत पसन्द है। कहो इस पसन्द की निगाह में कोई दूसरी चाह न भरी हो ! फागुन में बूढ़े भी उत्पाती हो जाते हैं।

4. काशी के ज्ञानमण्डल ने अपनी 'मर्य्यादा' खो दी, क्योंकि जब 'स्वार्थ' सिद्ध नही होता तब 'मर्य्यादा' का ध्यान नही रहता !

5. सुनते हैं, दरभंगा-नरेश अपने गढ़ की रक्षा के लिये एक नये फैशन के हथियार की खोज में हैं। यह भी सुनने में आया है कि होली के दिन उनके गढ़ में हथियारो की प्रदर्शनी होने वाली है !

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

6. इधर असहयोग की लहर से उन बेचारे टकैहा सनातन धर्मोपदेशकों का रोजगार एकदम पट पड़ गया था, जो भोली-भाली धार्मिक जनता को उलटी-सीधी बताकर मजा मारने वाले और एकमात्र स्वार्थान्ध अर्थ-दास थे। इन दिनों हिन्दू सभा के कारण इन्हें नोच-खसोट करने का अच्छा मौका मिला है। एक गुरुजी ने तो गुरुणा गुरु काशी के पण्डों पर ही जाल फेंका था। परन्तु दैवयोग से गुरुजी की पटरी चौचक बैठ न सकी। इधर ठठेरे-ठठेरे बदलौअल का तार देखकर गुरुजी ने ग्रहण के मौके पर मोहान्ध महन्तो की उमड़ी हुई तोंद सुहलाना शुरू किया है। देखें, मुट्ठी भरती है या कोरा 'रामलड्डू' ही मिलता है।

[वर्ष 2, संख्या 29—7 मार्च, 1925

7. भारत-धर्म महामण्डल की ओर से एक सर्वधर्म-सदन बनने वाला है। उसमे सब धर्मों और संप्रदायों के उपासना गृह बनेंगे—मसजिद, गिरजा, मन्दिर आदि। हमारी राय है कि पालटपन्थी-संप्रदाय का भी एक उपासना-मन्दिर अवश्य रहना चाहिये। आइन्दे 'विद्याव्यासंगी' महाराज की मर्जी!

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

8. मतवाला-मंडल के प्रसिद्ध पियक्कड़ मुन्शी नवजादिकलाल श्रीवास्तव की लगातार तीन शादियाँ एक ही घर मे हो चुकी—बड़े भाग्य से उनको एक 'त्रिफला साला' मिल गया है—तीन फल दे चुका, चौथे फल को 'पाल' डाल रक्खा है। अगर वह भी मुन्शीजी के बाँटे पड़ा तो कहना न होगा कि उनकी 'सारी खुदाई' चारो पदार्थ देनेवाली कामधेनु है।

9. काशी के जिन पण्डितो ने गजाकार लम्बायमान घोषणापत्र निकाल कर भारतधर्म-महामण्डल और महाराज दरभंगा का बहिष्कार किया था, वे ही सारे-के-सारे पण्डित उनकी सभाओं मे मक्खन ले-लेकर बड़े हौसले से पहुँचे थे। इन्हे तो टका थमा दो, 'चचा' कहवा लो।

10 कौंसिलों के मेम्बर बहुत दिनो से अपना-अपना 'बिल' पेश करते आ रहे हैं, मगर आज तक कुछ फल नही निकला। अब उन्हे यह देखना चाहिये कि उनके 'बिलो' मे कौन-सा ऐसा दोष अटका हुआ है, जिससे इतनी मशक्कत करने पर भी कुछ पैदावार नही होती।

[वर्ष 4, संख्या 40—12 मार्च, 1927]

□□

चंडूखाने की गप्प

[फक्कड़ बादशाह]

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्

1. जबसे इस देश में अछूतोद्धार का आन्दोलन उठा है, तबसे देवलोक मे बड़ी सनसनी फैली है। बेचारे देवता घबरा उठे है। सुनते हैं, वहाँ की 'नेशनलिस्ट पार्टी' इस प्रश्न पर विचार कर रही है। यदि आवश्यक हुआ तो वहाँ भी यह आन्दोलन जारी किया जायेगा। पार्टी की इस दुरभि-सन्धि की खबर पाकर विधाता की सरकार ने देवलोक के तमाम मन्दिरो और कुओं पर 'प्युनिटिव पुलिस' तायनात की है और इस आन्दोलन का विरोध करने के लिये काशी से कई अच्छे-अच्छे पण्डित वहाँ बुलाये गये हैं।

2. गण्डकी-तट-वासी ऋषिकल्प ज्योतिषियों ने बताया है कि नवदम्पती 'मतवाला' और 'माधुरी' के संयोग से कलकत्ता में शीघ्र ही एक 'मौजी' बच्चा पैदा होगा! यह महातेजस्वी बालक कार्तिकेय की तरह महासुन्दर और मदन की तरह अनंग होगा। इसका प्रभाव मनुष्य-शरीर के स्थान-विशेष पर पड़ेगा। 'महादेव' ने चाहा तो यह 'मकार-परिवार' शीघ्र बहुवंश हो जायेगा।

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

3. हिन्दू-तीर्थों के पण्डों ने तीर्थराज प्रयाग में एक सभा करके इस शर्त्त पर दक्षिणा लेने की प्रथा उठा देने का संकल्प किया है कि यजमानों या यात्रियो की युवती स्त्रियाँ स्वच्छन्दता पूर्वक मन्दिरो मे दर्शनार्थ आया करें।

[वर्ष 2, संख्या 29—7 मार्च, 1925]

4. कविवर पण्डित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' जी ने बालक, युवा, वृद्ध, नर, नारी, हिन्दू के छोटे बड़े सभी 'ध्वजधारी' अधिकारी सज्जनों और सजनियों को, आमतौर पर तथा अमीनाबाद के कोठेवाली श्रीमती प्रोषित-पतिका रामदुलारी और श्रीमती रूपकिशोरी गणिका को, ताल ठोंककर खुला चैलेंज दिया है कि होली के दिन अपने बन्धु, बान्धवों और बन्धुनियों को साथ लेकर आवें और भरपेट भिण्ड भिड़ावें।

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

5. भरतपुर के हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति चुने गये हैं अलवर-नरेश। उन्होंने अपने भाषण में एक जगह दीर्घ-शंका उपस्थित की है कि मुसलमान-भाई अगर हिन्दी की होड़ में अपनी उर्दू को भिड़ावेंगे तो हिन्दू क्या कर सकेंगे।

6. पंडित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' आजकल संस्कृत के प्राचीन कवियों के सम्बन्ध में शोधन-कार्य कर रहे हैं। करीब-करीब सबका शोधन हो चुका, केवल 'विकट नितम्बा' का शोधन करना शेष है।

7. बहुत दिनों के बाद यह भेद खुला है कि पं० सुमित्रानन्दन पन्त जुल्फें बढ़ाकर, लचक-मटक सीखकर, नाना भाँति के प्रयत्नों से स्त्रीत्व प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे है, यहाँ तक कि पुलिंग शब्दों में भी धीरे-धीरे स्त्रीलिंग का आरोपण कर रहे हैं। उन्होंने प्रोफेसर पं० बदरीनाथ भट्ट बी० ए० को लिखा था कि हमारा स्त्रीत्व सार्थक कीजिये। इस पर भट्टजी ने भी उत्तर दे दिया है कि हम तो आप ही के लिए आज तक कौमार्य व्रत धारण कर लखनऊ की आबहवा का सेवन कर रहे हैं।

(वर्ष 4, संख्या 40 — 12 मार्च, 1927)

□□

हमारी तो बस 'हो-ली' !

[रामनाथ लाल 'सुमन']

हाय ! वे भी एक दिन थे, जब इस शस्यश्यामला भूमि पर दूध की धारायें बहा करती थी, जब कालिन्दी के कलित कलेवर में सुन्दर सरोजों की बाढ़ थी, जब सुरसरि का तट आनन्दोन्मत्त मोरों और कोकिलो के कल-कूजन से गूँज उठता था। उसके बाद—वे भी एक दिन थे, जब मेखलाधारी ऋषियों की 'तत्वमसि' ध्वनि से वायुमण्डल मे प्रकम्पन होता था, यज्ञकुण्ड की लपटें संसार में दिव्य ज्ञान की ज्योति फैलाती थी। और—वे भी एक दिन थे, जब योद्धाओं के भयंकर हुँकार से मेदिनी काँप उठती थी, ऊपर-नीचे होने लगती थी। और सुनोगे ? वे हमारे ही दिन तो थे, जब एक साधारण योद्धा ने स्वयं भगवान् को ही ललकार कर कहा था—'सूच्यग्रं न दास्यामि विना युद्धेन केशव !'

और सुनना चाहते हो ? नहीं, जाने दो, गुलामी की चक्की के गेहुँओ ! अपनी कायरता की कहानी सुनकर क्या करोगे ? उधर से आँखें ही फेर लेना अच्छा है, जिनकी आँखों के सामने से, अभागे अशान्त विश्व का त्राता, महात्मा ईसा की पवित्र वाणी से संसार को कँपा देनेवाला, शान्ति का उपासक, तपस्वी—अशान्ति फैलाने के अपराध में—देखते-देखते छीनकर जेल की कोठरी में ढकेल दिया गया हो; किन्तु ईश्वरेच्छा कहकर पिण्ड छुड़ाने में जिन्हें ज़रा भी लाज न आई हो, उन्हें उनकी मर्यादा सुनाना क्या और न सुनाना क्या ? जीवन में ही मरे हुए हम अभागे गुलामों की सन्तान हमारे नाम अपने मुँह पर किस हौसले से लावेगी ?

° ° ° °

हाँ, तो उस समय भी हम होली खेला करते थे और आज भी खेलते हैं—पर उस समय अपने हृदय के आनन्दोल्लास में डूबकर, प्रेमरंग से सराबोर होकर खेलते थे और आज रोकर, अपना कलेजा मसोसकर खेलते हैं। उन दिनों भी हम होली मनाते थे, जब हमारे बनाये हुए दिव्य मलमल से यूरोप की नवोढ़ा युवतियों का शृंगार होता था और आज भी होली खेलते हैं, जबकि हमारी बहुएँ वस्त्राभाव मे गीली धोती पहने हुए उसके छोर सुखाकर दिन

बिताती है। तब भी हम होली खेलते थे जब रुपये के मनों अन्न मिलते थे और आज भी मनाते है जबकि वमन किये हुए अन्न को धो-धोकर खाने वालो की कमी नही है !!! हमारी बेशर्मी पर, हमारी बेगैरती पर, भले ही लोग थूका करे, हँसी उडाये, आवाजें कसें, किन्तु हम अभागे जीव सुनते कब है ?

आज नारद की वीणा ध्वंस हो चुकी है। हमारा संगीत भंग की धारा में बह गया है। हमारी लाज कुलवधुओं की ओर झांकते-झांकते दूर हो गई है। होली का संजीवनोत्पादक पवित्र प्रेम वेश्याओ के मुखड़े तक ही खतम हो रहा है। हमारी पवित्र जिह्वा दूसरे को गन्दी गालियाँ सुनाकर तृप्ति-लाभ करती है। विदेशी गुलाल और चकचकाती हुई अद्धी के कुर्त्ते, शतशत विधवाओं की आहों को कुचलकर, पहने जाते है। हमारी ऐंठ, अपने सेवको तक ही समाप्त हो जाती है। हम अपने नाच-रंग, खुशी-मुजरे और भंगभवानी की उपासना मे यह सोचकर कभी खलल नही डालना चाहते कि हमारे ही घर के दस करोड भाइयो के पेट मे मुश्किल से एक समय चारा पड़ता है। आज यही हमारी होली है ! हम अभागो को कौन बतावेगा कि ये आँसू हर्षातिरेक मे उमड़े हुए हृदय के मोती है या कलेजे को चीरकर दो टूक कर देने वाली निगूढ क्रन्दन-ध्वनि के अशक्त और मौन दूत ?

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

□□

144 !!!

[कविरत्न 'विनोदानंद']

अरे क्या पूछते हो ? मेरा नाम 144 है। मैंने बड़ों-बड़ों का मान-मर्दन कर दिया। पुष्प-शय्या पर शयन करने वालों को कारागार की कँकरीली धरती पर सुला दिया। सिंह की तरह गरजनेवाले वक्ताओं के मुँह पर ऐसा मुछीका चढ़ाया कि उनकी बोलती बन्द कर दी। जो काम बड़ी-बड़ी शक्तियों से महीनों में नहीं हुआ था उसे मैंने मिनटों में कर दिखाया ! ! ! जिस सभा में पहुँच गई उसमें बस मैं ही मैं मटकने लगी। बड़े-बड़े वीर मुझसे मगज मारकर मर गये, पर किसी से मेरा बाल बाँका भी न हुआ। मैं मोम की तरह इतनी मुलायम हूँ कि मजिस्ट्रेट-मदारी चाहे जिस ओर मुझे घुमा सकता है। साथ ही, मैं वज्र की तरह ऐसी कठोर हूँ कि जहाँ पंजे अड़ा देती हूँ फिर संपटपाट किये बिना नहीं टलती। कहो, खबर है असहयोग आन्दोलन की, पता है नान-कोपरेशन मूवमेंट का ? कैसे करिश्मे दिखाये, क्या गुल खिलाये, कितना कौतुक किया ? रोज यही सुन पड़ती थी कि आज फलाने लाल लद गये, कल अमुक दास गये, परसों इनके देव बेड़ियाँ खटका रहे हैं और अतरसों छिमके दत्त हथकड़ी पहने जा रहे हैं। भाई, सच समझना, मेरी बदौलत लोगों में हिम्मत आ गई। जो लोग कैद के नाम से कानों पर हाथ रखते थे, वे भी मेरी ललकार पर 'जेल की चिड़िया' बनने को तैयार हो गये। और तो और, अबला कहानेवाली स्त्रियाँ भी 'सबला' बन बैठीं ! ह ह ह ह ह ! इन बातों से मैं खूब मशहूर हो गई हूँ। मेरा नाम शैतान की तरह शोहरए-आफ़ाक़ हो गया है। मेरी सर्वतोमुखी गति है। मैं पहले ही मोम की तरह 'मुलायम' और वज्र की तरह 'कठोर' बन चुकी हूँ। राजनैतिक दंगल से जी ऊब गया, तो अब मेरे मदारी ने मुझे धार्मिक और सामाजिक क्षेत्रों की पैमायश करने भेजा है। पटना, बहराइच, लखनऊ, कानपुर में मैं तमाशा दिखा चुकी हूँ। अहा ! मेरे नाम में बड़ी विचित्रता है। मैं तीन अंकों से बनी हूँ, जिनका योग 9 होता है। संसार का गणितशास्त्र इन अंकों में ही समाप्त हो जाता है। अर्थात् मैं 'इल्म हिन्दसा' की दादी हूँ, या यों कहिए कि जनता से पूजा पाने के लिए नवग्रह-स्वरूप हूँ। मैं एक हूँ और चार-चार भी। अर्थात् संसार

को उपदेश देती हूँ कि एक परमात्मा पर विश्वास रखते हुए काम, क्रोध, मद, लोभ से बचो; धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति में प्रयत्नवान होओ। पोलीटिकल पार्टी व्यर्थ ही मुझसे भयभीत होती है। मेरा '1' उन्हें एकता का बोध कराता है, '4' साम, दाम, दण्ड, भेद सिखाता है और दूसरा '4' चरखा, करघा, खद्दर एवं अछूतोद्धार की ओर जाता है। समझे ? मैं इतनी विशाल और ऐसी व्यापक हूँ। मैं लोगों से मैत्री करने आती हूँ। लोग मुझे देखकर बिदकते हैं, कोसते हैं, भागते हैं। इसमें मेरा क्या दोष ? मैं क्या जानूँ ? मेरा मदारी जाने, जो मेरी डोरी इधर से उधर और उधर से इधर करता रहता है—

वा की माया मोहि नचावे—
मैं कठपुतली वह डोरी है
दई मारे, भारत होरी है !

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

हिन्दी-संसार की होली

[मिस्टर परगेटिव]

अररररररर भैया ! सुन लो मोर कबीर !

कोई नचावे रंडी-मुंडी, भाँड़-भगतिये कोई ।
आप नचाओ लेखकगण को, देश देश यश होई ।
भला यह ढंग निराला आला है ॥1॥

छोड़ा बूढ़े 'महावीर' को कर बख्शी से प्रीति ।
कलियुग की 'विद्यादेवी' की खरी अनोखी रीति ॥
भला यह 'पदुमलाल' मनभाया है ॥2॥

'माखनलाल' 'प्रताप' बने ये लेकर कर करवाल ।
'बालकृष्ण' की 'प्रभा' निराली, मूरति मंजु रसाल ॥
कृपा 'शिवनारायण' 'गणेश' की है ॥3॥

'राधामोहन' ने 'गोकुल' तज 'नागनगर' में आई ।
'प्रणवीरों' में नाम लिखाया, शासक रहे लजाई ॥
बड़ा संग्राम-वीर यह बूढ़ा है ॥4॥

ब्याह 'माधुरी' के संग होता, 'मतवाले' का आज ।
देख लार टपकी यारों की, —गिरी गगन से गाज ॥
मरे उल्लू चुल्लू भर पानी में ॥5॥

'लाल-दुलारे' नये पुरोहित 'नारायण' के 'रूप' ।
मंगल ब्याह रचायें इनका, जोड़ी अजब अनूप ॥
भला अब मंगल गीत सभी गाओ ॥6॥

'महादेव' मतवाले नाचें 'शिवपूजन' के संग ।
'मुन्शी नौजादिकलालाजी' देवें ताल मृदंग ॥
मजीरा 'सूर्यकान्तजी' खनकाते ॥7॥

को उपदेश देती हूँ कि एक परमात्मा पर विश्वास रखते हुए काम, क्रोध, मद, लोभ से बचो; धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति मे प्रयत्नवान होओ। पोलीटिकल पार्टी व्यर्थ ही मुझसे भयभीत होती है। मेरा '।' उन्हे एकता का बोध कराता है, '4' साम, दाम, दण्ड, भेद सिखाता है और दूसरा '4' चरखा, करघा, खद्दर एवं अछूतोद्धार की ओर जाता है। समझे ? मैं इतनी विशाल और ऐसी व्यापक हूँ। मैं लोगों से मैत्री करने आती हूँ। लोग मुझे देखकर बिदकते हैं, कोसते हैं, भागते है। इसमें मेरा क्या दोष ? मैं क्या जानूं ? मेरा मदारी जाने, जो मेरी डोरी इधर से उधर और उधर से इधर करता रहता है—

वा की माया मोहि नचावे—
मैं कठपुतली वह डोरी है
दई मारे, भारत होरी है !

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

हिन्दी-संसार की होली

[मिस्टर परगेटिव]

अररररररर भैया ! सुन लो मोर कबीर !

कोई नचावे रंडी-मुंडी, भाँड़-भगतिये कोई।
आप नचाओ लेखकगण को, देश देश यश होई।
भला यह ढंग निराला आला है ॥1॥

छोड़ा बूढ़े 'महावीर' को कर बख्शी से प्रीति।
कलियुग की 'विद्यादेवी' की खरी अनोखी रीति ॥
भला यह 'पदुमलाल' मनभाया है ॥2॥

'माखनलाल' 'प्रताप' बने थे लेकर कर करवाल।
'बालकृष्ण' की 'प्रभा' निराली, मूरति मंजु रसाल ॥
कृपा 'शिवनारायण' 'गणेश' की है ॥3॥

'राधामोहन' ने 'गोकुल' तज 'नागनगर' मे आई।
'प्रणवीरो' में नाम लिखाया, शासक रहे लजाई ॥
बड़ा संग्राम-वीर यह बूढ़ा है ॥4॥

ब्याह 'माधुरी' के संग होता, 'मतवाले' का आज।
देख लार टपकी यारो की, —गिरी गगन से गाज ॥
मरे उल्लू घुल्लू भर पानी में ॥5॥

'लाल-दुलारे' नये पुरोहित 'नारायण' के 'रूप'।
मंगल ब्याह रचायें इनका, जोड़ी अजब अनूप ॥
भला अब मंगल गीत सभी गाओ ॥6॥

'महादेव' मतवाले नाचें 'शिवपूजन' के संग।
'मुन्शी नौजादिकलालाजी' देवें ताल मृदंग ॥
मजीरा 'सूर्यकान्तजी' खनकाते ॥7॥

कल का पैदा चला ब्याहने 'सरस्वती' को आज।
माता से परिहास ! छोकरे ? तुझे न आई लाज ?
भला कैसा खाया 'रसगुल्ला' है ॥8॥
'कर्मवीर' के 'ठाकुर छेदीलाल' रहे प्रण ठान।
कौंसिल के द्वारा काटेंगे नौकरशाही-कान ॥
भला वे भी तो रहे बरिस्टर हैं ॥9॥
'गहमर' के 'गोपालरामजी' हिन्दी के जासूस।
करे विलास 'विलास भवन' में छोटा छप्पर फूस ॥
अहा ! क्या उलटी बानप्रस्थी है ॥10॥
आज बनाओ 'श्यामसुंदर' को 'सभा' बीच अलबेली।
अँगिया चोली भी पहनाओ, होवे रेलापेली ॥
भला यह होली बरसाने की है ॥11॥
'लाला' ने 'भगवा ना दीना' 'दीन' बने दिन रात।
'उग्र' भाव धारण कर अब तो, खड़े चलावें लात।
भला यह बीरा्बडा किष्किन्धा का ॥12॥
'नाथूराम' सदा 'शंकर' का 'जगन्नाथ' से जोड़।
बदाबदी साहित्य क्षेत्र में, करें परस्पर होड़ ॥
भला यह ताण्डव नृत्य अनोखा है ॥13॥
है 'समस्त नारायण जी' 'शिक्षा' अगम अपार।
मिले आय 'विधुशेखरजी' से जहँ बिलसे तलवार ॥
भला 'असिधारा-व्रत' कब तक होगा ॥14॥
'भारतमित्र' हुआ 'शैदा' है चोरो पर ही आज।
दिल से, जी से, हुआ फिदा है, 'विश्वम्भर' के राज ॥
भला 'गर्देजी' ने गहरी छानी ॥15॥
है 'स्वतंत्र' और 'विश्वमित्र' का यह सिद्धान्त अपेल।
छुआछूत का भूत भगे हो ब्राह्मण-भंगी-मेल ॥
भला जग 'मूल' 'अम्बिकाजी ही हैं ॥16॥
'झाबरमलजी' ने झांसी दे, दिया 'उमा' को ठेल।
चले छोड़ कलकत्ते को वह, यह 'नेकी' का [illegible]
नया '[illegible]
'बँगवासी' को फाँसी दे [illegible] यह [illegible]
छोड़ा 'रामदत्त' 'जौहर [illegible] के [illegible]
भला

कालिदास और शेक्सपियर के नाम करें बदनाम।
महामुछन्दर बड़े लफन्दर खावें माल हराम ॥
भला सब माल मसाला चोरी का ॥19।

'जयशंकर' के नाटक पढ लो खुल जायेगी आँख।
'भारतेन्दु' के रहते होगा कभी अँधेरा पाख?
भला दुस्साहस की भी तो हद है ॥20॥

'दफ्तर' देख 'दरोगाजी' का 'कातिकजी' का मोर।
'व्यास नरोत्तमजी' का देखो दाढ़ी-दंगल घोर ॥
भला यह सब 'प्रसाद ईश्वर' का है ॥21॥

'नागराजजी' नागफाँस में फँसे बड़े बेतौर।
मिटी तरुणता की चचलता बदल गया सब तौर ॥
भला यह, करनी की भरनी देखो ॥22॥

है न नाम को 'पाठकजी' के मन में तनिक 'प्रमोद'।
'बन्धु-बिहार' बन्द होने से लहते नहीं विनोद ॥
भला अब धीरज कैसे होवेगा? ॥23॥

'लक्ष्मी बाबू' ने 'लक्ष्मी' से कीरति लही अमन्द।
कौंसिल के झनकाझूमर मे हुई पत्रिका बन्द ॥
भला 'लाला' की यह लुटिया डूबी ॥24॥

'लाला रामसहायलाल' की 'श्रीविद्या' घर-फोड़।
'विधु' से नौसिखुए को छोड़ा 'दीन' से नाता जोड़ ॥
भला यह 'गया' से जाती काशी है ॥25॥

नाम 'केसरी' 'सूँड गजो' सी है बकरे सी पूँछ।
छूँछ मनोरथ रहे तुम्हारे ज्यो बिल्ली की मूँछ ॥
तुच्छ यह 'नौरंग' तेरा रंग सारा ॥26॥

काककण्ठ ने चोच निकाली काव्यकण्ठ कर बन्द।
पिता-पुत्र-संग्राम मचा है लड़ने दो स्वच्छन्द ॥
भला इस बीच तीसरे क्यों बनते? ॥27॥

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

□□

होली की झोली

[पं० गौरीशंकर शर्मा]

अरररररर सुन लो यारो मोर कबीर !
लम्बा टीका हाथ सुमिरनी गेरुआ कफनी धार।
पर नारी पर डीठ लगावें फैलावें व्यभिचार।
भले जी बगुला-भगत बने फिरते ॥ 1 ॥

नित्य 'अहिंसा परमो धर्मः' करते रहे प्रचार।
दीन दुखी पर छुरी चलावें, निकले रँगे सियार।
भला खद्दरपोशों से पिण्ड छुड़ा ॥ 2 ॥

कोट बूट पतलून डाटकर सिर पर रखते हैट।
समझे हमी मनुष्य जगत में, बाकी सब हैं 'रैट'।
भले तुम फैंट बने हो ऐ मामू ॥ 3 ॥

पर्दा-'सिस्टम' बहुत बुरा है, इसको करके दूर।
संग लिये ! लेडी को घूमे नकली बने हुजूर।
भले दिन रात फिरें चपलूमी में ॥ 4 ॥

हिन्दी 'लैंगवेज' को मुर्दा कह बोलें गिटपिट बैन।
समझें उसी गुणी को धन दे बाकी फूलिशमैन।
बने इंगलिशमैनों के शहजादे ॥ 5 ॥

नया ब्याह बूढ़ो का भैया कहीं अगर रुक जाय।
सच मानो तो युवक पड़ोसी बिना मौत मर जाय।
हाय बाबा का ब्याह करा दो राम ॥ 6 ॥

कलकत्ते के धरमतला में अधरामृत की आस—
रखकर धरमधका खाते है कितने लक्ष्मीदास।
नई बीवी घर में 'ग्वाला'-संग है ॥ 7 ॥

दुराचार दुरि जाय देश से, चाहें नेता लोग।
तो बस एक एक वेश्या से, कर लें शीघ्र नियोग।
बांस जब रहे न बंशी कहाँ बजे ? ॥ 8 ॥

बन्धु अछूत विधर्मी होकर यदि अफ़सर हो जायँ।
भाग सराहें तो फिर उससे सादर हाथ मिलायँ।
यही तो धर्म-सनातन-लीला है ॥ 9 ॥
चेतगंज काशी में देखो 'मण्डल' एक महान।
भाँति-भाँति के 'भूषण' बिकते, जहाँ खुले मैदान।
टका दे इच्छा पूरी कर लीजे ॥10॥
ज्ञानी ध्यानी दास पहनते हैं तन पर कोपीन।
खड़े घाट पर नजर लड़ाते उनके सुत शौकीन।
अजब है भोला बाबा की काशी ॥11॥
धंधा कोई मिले न तो फिर संपादक बन जाव।
कहीं का ईंट कहीं का रोड़ा कर दो लेख चुनाव।
कला को धता बता दो अब भाई ॥12॥
काव्य-कनक की कड़ी कसौटी 'खन्नाजी' का द्वार।
रगड़ रहे हैं पकड़-पकड़ कर कवियों के हथियार।
बड़ा अफसोस धातु खोटा निकला ॥13॥
छैल-छबीली अति गरबीली 'रूप' 'माधुरी' ओर।
ताक रहा छैला 'मतवाला' उड़ा न ले चितचोर।
'लालजी' सँभल जाइये होली है ॥14॥
दिखलाई देता 'भविष्य' है 'वर्तमान' अरु 'आज'।
पर न 'भूत' के दर्शन होते, बिगड़ रहा सब साज।
भला भेजो दाता कोई घर-बैठे ॥15॥
है 'गणेश' विघ्नों को हरता, देता खरी सलाह।
कितने अन्यायी कठपुतलों को सिखलाता राह।
धन्य है उस 'प्रताप' कनपुरिया को ॥16॥
इक 'वकील साहब' की 'लक्ष्मी' जाती देश विदेश।
दो रुपये लेकर सालाना, हरती विरह कलेश।
धन्य इन उपकारी भगवतियों को ॥17॥
एक 'प्रयागी पण्डितजी' की 'गृहलक्ष्मी' चितचोर।
'शिशु' समेत प्रतिमास पधारे पहन घाँघरा घोर।
भेंट में सिर्फ़ चार रुपये लेती ॥18॥

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

□□

गुलाल की मूँठ

[श्री बेताल]

छ र र र र र र र कबीर !

लेकर कामन बिल का खसड़ा गई 'बसन्ती' पार।
सनहुक लेकर बाँग लगाया पड़ी किन्तु फटकार॥
कौन है पुर्सां हाल तुम्हारा॥ 1॥

पार्लामिण्ट-मेम्बरों ने भी कही यही ध्रुव बात।
चल शतरंजी चाल अनोखी किया सभी को मात॥
टैक्स की बन्दी कर दो॥ 2॥

'होमरूल' का पचड़ा छेड़ा रचकर अजब प्रपंच।
घूमघाम कर आयी बूढा खाकर टी और लंच॥
मंच पर धर ललकारै॥ 3॥

द्वापर युग मे रही पूतना धरती रूप अनेक।
कलियुग की भी देखो लीला यारो खाकर 'केक'॥
'शेक' यह राजनीति की॥ 4॥

सपरू के संग लाला जी भी बने कौंसिल-भक्त।
लेकर चरखा गाँधी बाबा बैठे बने विरक्त॥
वीर 'सन्यस्त' हुये है॥ 5॥

केलकर, किलक किलक कर गावें प्रति सहयोगी गीत।
जोर शोर से रोर मचाकर लेंगे भारत जीत।
मंत्री-पद के ये भूखे है॥ 6॥

मिस्टर ताम्बे भी पीछे से छोड़ स्वराजी मंत्र।
लगे घुमाने बड़े लाट का धर के शासन-यंत्र॥
पेट अब खूब भरेगा॥ 7॥

लिबरल दल की बात निराली 'मद-रत' हैं सब लोग।
पूँछ हिलाकर खीस निपोरें लगा स्वार्थ का रोग॥
यही 'हे हें' दल है॥ 8॥

कष्ट उठाना देशभक्ति हित है यह बुरा विचार।
लेक्चर झाड़ो मौज उड़ावो केवल करो प्रचार॥
बनो उपदेशक बाबा ॥ 9 ॥

'अलीबन्धु' अल्लाह मनाते सर रहीम के हेत।
'गढ़' में आज 'अली' चिल्लाते खाते हिन्दू-खेत॥
लखो उजड़ी जाती खेती ॥10॥

'श्रद्धानंद' ने धूम मचाई शुद्धि किया भरपूर।
कहाँ निजामी के भँड़ुवे हैं, कहाँ सरंगी-सूर॥
तबल-तबलीगी ठनकावें ॥11॥

'दीनदयालु' मीन बिन पानी मर्सें हाथ पछतांय।
टका पंथ तो बन्द हो गया बैठ सुंठौरा खांय॥
बुढ़ौती में कोंपर चाटैं ॥12॥

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

होली की फूलझड़ी

[श्री सिड़ी]

हिन्दू-महासभा ने यारो, नष्ट किया सब खेल।
मरे पुराने पोंगापंथी, लगी कलेजे सेल ॥
मिले गुलछर्रे सारे मिट्टी में ॥ 1 ॥

दहल उठी है तोंद महन्ती, खुल गई सारी पोल।
हा ! हराम का हलुआ पूरी, होगा मोती-मोल ॥
जमाना बदल रहा है ॥ 2 ॥

माथे खौर लगाकर, बनना पण्डित परम प्रवीन।
धर्म-कर्म का ठीका लेकर, बैठ बजाना बीन ॥
न बन आवेगा बाबाजी ॥ 3 ॥

जिनके धन से तोंद फुलाया; बैठे करते चैन।
हाय ! उन्हीं की कन्याओं से, लगे लड़ाने नैन ॥
हद् हो गई हरामीपन की भी ॥ 4 ॥

बाल पके हैं कमर झुकी है, भुरकुस हो गये दाँत।
धनुही से अकड़े फिरते हैं, धरे हाथ से आँत ॥
किन्तु है हविस ब्याह की बनी हुई ॥ 5 ॥

बोतल छाकें रांड मचावें, हरें पराया माल।
वही अभागे धर्म-ध्वजा धर, बैठ बजावें गाल ॥
हाल है यही सनातन हिन्दू की ॥ 6 ॥

घर में विधवा पोती बैठी, बाबा करते ब्याह।
ऐसे उल्लू के पट्ठे का, कर दो चेहरा स्याह ॥
जला दो जीते-जी होली ॥ 7 ॥

जिनके बल से बढ़े विधर्मी, करते अत्याचार।
उन्हीं अछूतों को अपनाते क्यों फटती है यार ॥
उन्हें क्या नहीं बनाया ईश्वर ने ॥ 8 ॥

विधवाओं को ब्रह्मचर्य का देते हो उपदेश।
किन्तु स्वयं हो काम-क्रोध में रहते सने हमेश॥
साज की चाट गये हड्डी॥ 9॥

टेढ़ी टोपी चख में चश्मा, छिकुनी पकड़े हाथ।
गिटपिट करते टहल रहे हैं, धरे फ्रेंड का हाथ॥
यही नवयुवक देश की आशा है॥10॥

धर्म कर्म का मर्म न जानें, कहें पिता को 'फूल'।
सारा बाना धरे जनाना, बकते ऊलजलूल॥
फूल ये बैठेंगे अब कोठे पर॥11॥
—होली है, भई होली है!

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

लीडरों की होली

[ऐण्टी लीडर]

लीडर सारे हुए इकट्ठे, खेल रहे हैं फाग !
करो एकता, करो एकता, रोज अलापें राग ।।
पोल, पर खुल ही जाती है ।।1।।

सत्य, अहिंसा, खद्दर, चर्खा, छिन्न-भिन्न है आज ।
फिर भी यारो टपक पड़ेगा, एकाएक स्वराज ।।
'लँगोटी बाबा' की जय हो ।।2।।

'कौंसिल रेंकिंग' का चमका दे, बिछा वकीली जाल ।
बमभोला को फाँस लिया है, किया देश बेहाल ।।
कौंसिलें टूट गईं यारों ।।3।।

हम तो हैं 'बापू के सैनिक, गाँधी है सरदार ।
हिन्दू-मुसलिम-इत्तहाद पर, सब कुछ दारमदार ।।
ढोल दिन-रात पीटते हैं ।।4।।

कभी गगन तो कभी धरातल तक की दौड़ लगाय ।
भोली जनता श्रद्धा-पथ में सौ-सौ चक्कर खाय ।।
गर्जना करे शेर-पंजाब ।।5।।

सदा सँभल कर रहते बाबा, बिगड न जावे जात ।
खूब जमाई अहा ! बेचारे समधी के सिर लात ।।
तरीक़ा यही संगठन का ।।6।।

बुलबुल चहक रही है भैया, सुनो आज चहकार ।
मतलब क्या उसूल से हमको, असहकार सहकार ।।
रिझाना ही है अपना काम ।।7।।

कांग्रेस वालों की होली

चंदा लाओ नियम करेंगे जल्दी सविनय भंग ।
गोरी 'गवर्नमिंट' भागेगी, दुनिया होगी दंग ।।
देश की काया पलटेगी ।।8।।

देश-प्रेम है कैसी चिड़िया, राजनीति-मैदान।
नहीं मिलावे हाँ-में-हाँ जो, वही उमेठो कान।।
यही गाँधी-युग का है धर्म्म ।।9।।

'सेठी' कौन 'भुहानी' कैसा कम्यूनिस्ट ये यार।
डण्डे से कामिल-आजादी का दे दो उपहार।।
लाठियाँ कब आवेंगी काम ? ।।10।।

सत्य, अहिंसा, प्रेम आदि का खूब दिखाया नाच।
वह 'हथियार बन्द' बागी-दल कुचल दिया शाबास।।
सबक़ डायर से सीखा था ।।11।।

नौकरशाही की होली

न्याय करूँगा, न्याय करूँगा, खूब मचाया शोर।
अहा न्याय की हनी दुलत्ती, लौट गया इन्दौर।।
अनूठा न्याय लादकर लाया था ।।15।।

'बूढ़े बुल' के सिर में देख, घुसा बावला-भूत।
यही सबब है फागुन में ही चलवाया है जूत।।
नफा नीली आँखों का है ।।13।।

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

व्यंग्य रंग से रंगी हुई कबीर की ललकार

[कमला]

अ र र र र र र······कबीर ! भला जी भला—
होरी की मैं करूँ ठठोली, बुरा न मानें कोय।
जो कबीर को दोष लगावे, उल्टा दोषी होय॥
भला यह बरस दिनों की होली है ॥1॥
जात पाँत का ख्याल न रखना, आया फागुन मास।
साठ बरस के बूढ़े बाबा, रखे नवोढ़ा पास।
भला यह मस्त महीना फागुन का ॥2॥
कोल्हिन रक्खे, मूमिन रक्खे, रखनी रखे चमैन।
बूढ़े रँडुए युवक हो गये, युवकन को कब चैन।
भला बोतल ने रंग जमाया है ॥3॥
कोटि-कोटि जीवों की हत्या, करें लहेड़ी आप।
भक्त कहावें निर्दय होकर, करें कभी नहिं पाप।
भला धर्मादा खाता खोल दिया ॥4॥
तीन दिनो में गाल मारकर हुए दरिद्री सेठ।
लम्बी चौड़ी डींग हाँकते, दुष्टों के ये मेठ।
भला यह नया नशा है दौलत का ॥5॥
कभी भलाई करो न भाई, छिपकर रखना द्वेष।
मिले बड़ाई कर कुटिलाई, रक्खो सज्जन भेष।
भला इज्जत तो मिलती इसमें है ॥6॥
कंठी बाँधो तिलक लगाओ, लेव द्वारका छाप।
धोखा देना कभी न छोड़ो, बगुला भगत के बाप।
भला टट्टी की ओट शिकार करो ॥7॥
बेटी बेचो, बेटा बेचो, बेचो दासी दास।
बेच चुके अब हल्दी धनियाँ, कपड़ा और कपास।
भला इसमें क्या दौलत होती है ॥8॥

[वर्ष 5, संख्या 29—3 मार्च, 1928]

□□

होरी है

[लाला भगवानदीन]

एक ओर मोहन से मोहन सखान संग,
दूजी ओर शाहशाही कीरति किशोरी है।
परी झकझोर घोर फटी है सुधार चोली,
दीन्हीं लुढ़काय हेली पटुता कमोरी है।
चीर फार डारे सबै कुटिल कानून चीर,
वाक्य पिचकारी मारि कीन्ही बुद्धि भोरी है।
'दीन' कवि देखो आज देशभक्त खेलि रहे,
कौंसिल के आँगन में नोखी नई होरी है।

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

□□

माधुरी-मतवाला की तान

[कविता-कामिनी-कान्त पं० नाथूराम शंकर शर्मा]

कर ले प्यारी माधुरी, पातिव्रत-रस-पान।
देख सुनाता है तुझे, मतवाला वर तान॥

छवि निरख माधुरी वाला।
मटकता मोद-मढ़ा मतवाला॥

नाच दिखाता, गाल बजाता, उगले राग निराला।
हा! पर तू न दाद देती है, अटका कोप कसाला॥
मौज उड़ाती है बिन ब्याही, कर मुकवाला घाला।
तुझ-सी-रंग-ढंग-छवको के, संग पड़ गया पाला॥
रामदुलारी रूप किशोरी बरज रही मा खाला।
तो भी तजती नही कुलट्टों, पकड़ा छौंट छिनाला॥
गोपीनाथ 'कृष्ण' कपटी का, ओढ़ न कम्बल काला।
आ शंकर से धँरे बर का, धार धरैल दुशाला॥

[वर्ष 2, अंक 29—7 मार्च, 1925]

□□

'मतवाला' बनाम 'माधुरी' !

[होली का पत्र-व्यवहार]

(1)

1. माइ डार्लिंग !

हुए नमूदे जवानी उभारके क़ाबिल,
दिन आ गये हैं मुहब्बते प्यार के क़ाबिल।
ख़ुदा के वास्ते छोड़ो ख़्याल सादःपन,
तुम्हारा हुस्न है सोलह सिंगार के. क़ाबिल।
चुकाना दिल का सौदा है तो नक़द बोसे दो,
यह जिन्स तो नहीं हरगिज उधार के क़ाबिल।

कलकत्ता 7-2-26 —अधरामृताकांक्षी
मतवाला

(2)

[कोरा जवाब !]

मेरे खूसट.......... !

न कर तू बोसये रुखसार की हविस खूसट !
यह गुल नहीं रूखे ख़ारदार के क़ाबिल !

लखनऊ —माधुरी
15-2-26 20-2-26

□□

उदार मतवाले

[पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय]

पाते हैं प्रमोद माते रहते विनोद ही में
मित्र-मण्डली के नीके प्रेम प्रतिपाले हैं।
महादेव 'शंकर' महेश 'शिवपूजन' के
नव-नव जाति कमनीय पुष्प [थाले है।
लेख-कविताओं के लिए न कभी तंग करें
वणिक-प्रसंग से हैं दूर, शीलवाले हैं।
हिन्दी मे निराले। रंग-ढंग के दिखानेवाले
आले गुणवाले ये उदार मतवाले हैं।

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

माधुरी द्विरागमन

(प्रद्युम्न कृष्ण कौल)

आई गवनवा की सारी उमरि अबहीं मोरी बारी।
साज समान पिया लै आये कलकतिया संग चारी।
'नवजादिक', 'महादेव', 'निराला', 'उग्गर' निपट अनारी।
बने सब खद्दर धारी॥

चौक पुराय पूजि गौरी को लम्बोदर भुज चारी।
अँचरा पकरि कै 'निरलवा' बेदर्दी जोरत गँठिया हमारी।
सखी सब गावत गारी॥

विधना गति 'सरसुती', 'मनोरमा' बैरी भई महतारी।
'रूप' 'दुलारी' सँग सहेली घरवा से देत निकारी।
भई सबको हम भारी॥

गँवन कराय चले कलकतवा इत-उत बाट निहारी।
छुटत नवाबी नगर-लखनऊ छुटत गोमती प्यारी।
करम गति टरत न टारी॥

शंकर घोष लेन में राख्यो दीन्ह घूँघट पट टारी।
बोतलवारो बलम मोरा बौरा भरिकै पियलवा मारी।
न लेऊँ देत है गारी॥

कोरो घट रँग से भर राख्यो भर्यो कुमकुमा थारी।
भरी पिचकारी बेदर्दी ने मारी तंग भई चोलिया हमारी।
अनोखी निपट गँवारी॥

'मतवारो' गलबहियाँ देके सुन्दर पलँग बैठारी।
मलत गुलाल गुलगुले गालन ऐसो दुर्गति कारी।
बड़ी यह आफत भारी॥

बूढ़े बड़े सामने माँगत जोबन दान अनारी।
झूम-झूम पीवत अधरामृत 'सगरी सुध-बुध हारी।
जुलुम कर डारी भारी ॥
कहत जान माधुरी 'दुलारी हम पति हैं तुम नारी।
रूठ न जाहु रँग-रस लूटो कर लै भेंटे अँकवारी।
गोद में बैठहु प्यारी ॥

[वर्ष 4, संख्या 40—12 मार्च, 1927]

□□

मतवाला-माधुरी जन्मपत्रिका !

(गणनाकार श्रीमान्, ज्योतिषाचार्य पण्डित यमुनाप्रसाद शुक्ल शास्त्री विद्यामार्तण्ड, शिवकुमार-भवन, कलकत्ता)

आदित्यादि ग्रहाः सर्वे नक्षत्राणि च राशयः ।
आयु कुर्वन्तु ते नित्यं यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥

आयुष्मान 'मतवाला' का जन्मलग्न ।
जन्मकाल—श्रावण शुक्ला पूर्णिमा
रविवार प्रातःकाल धनिष्ठा नक्षत्र
दण्ड 2 पल 25



आयुष्मती 'माधुरी' का जन्मलग्न ।
जन्मकाल—श्रावणशुक्ला सप्तमी
शनिवार प्रातःकाल 'स्वाती' नक्षत्र
दण्ड 2 पल 5



फल—"दोनों जन्मपत्रिकाओ में 'ग्रहमेलापक' तथा 'गणना' बहुत ही उत्तम हैं। सन्तान, आयु, धन और सौभाग्य के योग भी अत्युत्तम पड़े हैं। परन्तु कन्या मे 'पुंश्चली' और वर में 'सम्पट' के योग आ पड़े हैं ! कन्या का गण 'देवता' और वर का गण 'राक्षस' है ! अतएव निरंतर वैर-भाव की सम्भावना है । इतिशुभम् ।"

जेहि बिधि तुम्हहि रूप अस दीन्हा।
तेहि जड़ वर बाउर कस कीन्हा ?



रूपकिशोरी—कस कीन्ह बर बौराह बिधि जेहि तुम्हहि सुन्दरता दई !

रामदुलारी—तुम्ह सहित गिरिते गिरउँ पावक जरउँ जलनिधि महँ परउँ ।
घर जाउ अपजस होउ जग जीवत 'बिदा नहिं' हौं करउँ ॥

माधुरी—जिनि लेहु मातु कलंक करुना परिहरहु अवसर नही ।
दुख सुख जो लिखा लिलार हमरे जाब जहँ पाउब तहीं ।

मतवाला—चलो जल्दी करो, नहीं तो गाड़ी छूट जायगी ।

केहि हेतु रानि रिसानि ?



मतवाला—कारन मोहि सुनाउ गजगामिनि निज कोप कर।
जानति मोर सुभाउ, बरोरू !
मन तव आनन चन्द चकोरू ॥

माधुरी—चलो हटो, बातें न बनाओ, जले पर नोन न लगाओ,
तुम बड़े नटखट हो, प्रेम दिखाते हो, मुँह भी चिढ़ाते हो,
और मेरी बोली में भूल भी दिखाते हो। अब मैं तुमसे न बोलूंगी।

मानिनी-मान-मोचन !



मतवाला—तुम लाख अनीति करौ पै करो हमैं नेह को नातो निवाहनो है !

माधुरी—ओ अम्मीजान ! ओ खाला ! देखो, यह दाढ़ीजार फिर मुझे तंग करने आया है !

आनन्द-नृत्य !



मतवाला—मेरी तेरी जोड़ी बनी मजेदार !
माधुरी—प्यारे सैयाँ पै मैं हूँ निसार ।

श्री लण्डन-स्तोत्रम्

[गांगेय नरोत्तम शास्त्री]

तत्रादौ विनियोगः

ओम् अस्य श्री लण्डनस्तोत्र-महा-माला मन्त्रस्य गांगेय ऋषिः अनुष्टुप्छन्दः श्रीलण्डनो देवता, विदग्ध. साधकः, पारतंत्र्य-बीजं, उत्तेजना शक्तिः, साम्य-विचार कीलकम्, कूट नीति-ज्ञानपूर्वकम् अर्थ-काम सम्पादने विनियोगः ।

ऋषिरुवाच—

उन्नताय सुरक्ताय बलिने छलिने भृशम् ।
अबलानां खण्डनाय लण्डनाय नमो नमः ॥ 1 ॥

अनेक देश-जनता गर्व-भञ्जन - कारिणे ।
धनाऽपहारिणे तुभ्यं लण्डनाय नमोनमः ॥ 2 ॥

मदोन्मत्त महोत्थानं लोकच्छिद्र-गवेषकम् ।
उग्र रूपं महाक्रूरं प्रचण्ड लण्डनं भजेत् ॥ 3 ॥

मण्डनं भोग-लिप्सानां, खण्डनं धर्म-कर्मणाम् ।
दण्डनं श्रमिणां लज्जा-भण्डनं लण्डनं भजेत् ॥ 4 ॥

देवैर्दैत्यैश्च यक्षैश्च पूजितं श्रम-कूजितम् ।
अप्सरोभिश्च गन्धर्वैः शोभितं लण्डनं स्मरेत् ॥ 5 ॥

सुराऽऽह्लादमानतं सुरा-प्राणं सुरा-प्रियम् ।
सुरा-सेवन-संवृद्धं प्रसिद्धं लण्डनं भजेत् ॥ 6 ॥

अनेक-योनि-संसिद्धं ततो यातं परां गतिम् ।
वेदान्ति-साधुवद्विश्वे निर्लज्जं लण्डनं नमेत् ॥ 7 ॥

कर्ज-व्यथने

भर्जनं भव्य-भावानां 'कर्जनं' युव-चेतसाम् ।
तर्जनं तपसां स्त्रीणां स्वर्जनं लण्डनं नमेत् ॥ 8 ॥

महाप्राणवती पुष्टां प्रजां बलबलायिताम् ।
दृष्ट्वा प्रौढां स्खलद्गर्वं लण्डनं तं स्मराम्यहम् ॥ 9 ॥

अभावैरभियोगैश्च खिन्ना ये निर्धना सदा।
तेषां कृषक-भृत्यानां खण्डनं लण्डनं भजे ॥10॥
शीघ्रं समुन्नतिं कृत्वा विशालाकार-धारक।
प्रचण्ड-वेग दुर्दान्त भो भो लण्डन पाहि माम् ॥11॥

युग्मम्—

अग्रे बलाऽबलं वीक्ष्य नत्युन्नति-विधायक।
शुक्राचार्यदुरद्राक्ष कौटिल्य-पथ-पारग ॥12॥
कदाचिद्वर्धित-वन कदाप्युच्छिन्न-जंगल।
ब्रह्माण्ड-गोलके पूज्य अहो लण्डन ते नमः ॥13॥
नाना-क्रीड़ा-कृतोत्थान प्रिय-नाटक दुर्दम।
भद्र-भोगेश भगवन् भो भो लण्डन ते नमः ॥14॥
रात्रौ प्रदीप्त रोचिष्मन् निद्रा-नाशिन् क्षुधाऽऽतुर।
क्रीडा-निशाचरी कुर्वन् कुरु लण्डन मे कृपाम् ॥15॥
समस्त-लोक-सन्तापिन्-नारी-हारिन् निशाचर।
अहो रावणवद्वीर्य वीर लण्डन ते नमः ॥16॥
कंसवद्बन्धु-विद्रोहिन्! एकान्त-व्यवसायकृत्।
शिशुहत्या-भ्रूणहत्याहेतो लण्डन ते नमः ॥17॥
दुर्योधन-समं माने वर्द्धने केतुवन्मतम्।
प्रवेशे सर्पवत्तूर्णं सरलं लण्डनं भजे ॥18॥
युवती-संघ-संचारिन् युवती-भ्रंश-भावुक।
युवती-व्यवसाये च धूर्त लण्डन ते नमः ॥19॥
भुक्त्वा भुक्त्वाऽपि भुंजान भक्ष्याऽभक्ष्य सुभक्षक।
पिशाचवद्भोजनेच्छो भो भो लण्डन ते नम. ॥20॥
अपूर्यमाण-भोगेच्छ! पर-भूमि-प्रकामुकः।
रात्रिन्दिवमसन्तोषित् लोभिन् लण्डन ते नमः ॥21॥
अहो बलमहो वेगः अहो क्रौर्यमयोन्नतिः।
तव लण्डन भूत्वाऽद्य अदृष्टा चाऽश्रुता पुरा ॥22॥
अद्य ब्रह्मा च विष्णुस्त्वं शम्भुरिन्द्रः प्रजापतिः।
कुबेरो वरुणो ह्यग्निः अश्विनौ मरुतस्तथा ॥23॥
दण्ड-दाता यमश्चासि, धर्मराट् च स्व-धर्मदः।
साष्टांगप्रणतिं कुर्वे, तुभ्यं लण्डन दण्डवत् ॥24॥

जगत्पूज्य जगद्गीत -!, परमाऽऽनन्द - मण्डन।
भक्ताऽनुकम्पिन् भगवन् रक्ष मां रक्ष लण्डन ॥25॥
इदं स्तोत्रं महापुण्यं दु.ख-शोक-विनाशनम्।
श्री लण्डन-सुलीलानां ज्ञापकं नीति-मापकम् ॥26॥
अर्थं विचारयन् सम्यग् यः पठेद्भक्तिमान्नरः।
आगलाऽन्त-मोदः स्यात् तस्य प्रेयान् पदे पदे ॥27॥
रात्रौ स्वप्ने यथा शम्भुः प्रोक्तवान् प्रीति-पूर्वकम्।
तथैव कृतवान् प्रातः गांगेयः स्तोत्रमुत्तमम् ॥28॥
इदं स्तोत्रं महासत्यं सत्य-लीला-समन्वितम्।
प्रत्यक्ष-फलदं चैव लक्ष्मी - नीति - मति - प्रदम् ॥29॥
गंगा - तीरे मन्दिरे वा वने वा जपतां शुभम्।
शान्तिः क्रूर - ग्रहस्येव लण्डनस्य प्रसादनम् ॥30॥
महा - भोग - प्रदं भव्यं महा - शक्ति - विधायकम्।
महा - सृष्टिकरं रम्यं महा - साहस - दायकम् ॥31॥
प्रचण्डं लण्डनं चित्ते चिन्तयन् यः पठेदिदम्।
लण्डनाऽनुग्रहात्तस्य भवेत्सर्वं - सुखं ध्रुवम् ॥32॥

[काशीस्थ पण्डितों की सेवा में नित्य पठनार्थ !]

[वर्ष 3, संख्या 27—20 फरवरी, 1926]

□□

साहित्य-शब्दार्थ-गड़ही

[कोशकार—श्री एकलिंग]

1. अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी [पहले पुलिंग अब नपुंसकलिंग]—आप नीम गोरे हैं, नीम वयोवृद्ध हैं, नीम मोटे हैं, और नीम-प्रसन्न मुख हैं। आपने अनेक अखबारों की बैलगाड़ियाँ हाँकी हैं और आजकल कलकत्ते के मशहूर मारवाड़ी स्वतंत्र की लैण्डो, बड़े रफ्तार से हाँक रहे हैं। वैसे तो आपका जीवन सदैव पवित्र रहा मगर एक बार सन् 1921 में आप बीबी नौकरशाही पर आशिक हो गये थे। इसी से जेल काट चुके हैं।

2. अयोध्यासिंह उपाध्याय [नपुंसकलिंग]—यदि आप अपनी पगड़ी से लैस होकर अचानक किसी महफिल में पहुँच जावें तो—अजी वाह, वाह! की ऐसी आवाज उठे कि आफत मच जाय। आप लाइब्रेरियन से, कानूनगो से, कवि से, लेखक से, प्रोफेसर तक हुए। प्रोफेसर भी ऐसे कि जी ही जानता होगा। आप कवि सम्राट हैं, महाकवि हैं, हिन्दी भाषा के आचार्य हैं, कवि-सम्मेलनों के पेटेण्ट सभापति हैं, ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के अनन्य दास हैं। साठा के बाद पाठा हैं और काव्य रस, पिंगलादि को चौपायों के रूप में हाँकने वाले हैं। आप शापत, ताडत, परुष कहन्ता, जूआ खेलक, रण्डी कान्ता मनुष्य को भी, यदि वह ब्राह्मण हो तो, अन्य जातियों के बड़े-बड़ों से बड़ा मानते हैं। आप महा-ब्राह्मण समर्थक हैं। जवानी में एक बार बाबा ज्ञानानन्द आपके ऊपर आशिक हो गये थे। उन्हीं ने आपको 'साहित्यरत्न' बना डाला है। आपके गर्भ से निकले हुए चौपाये सुन्दर होते हैं।

3. अम्बिकाप्रसाद गुप्त–[नपुंसक लिंग] आप पुराने और नये इन्दुओं के प्रकाशक और एडीटर, गल्पमाला के गड़क और पुस्तक प्रकाशन के बहाने हजारों मन कागज और सैकड़ों मन स्याही के बर्बादक हैं। पौने छः फीट ऊँचे हैं और दो फीट चौड़े। खाना एक छटाक से ज्यादा नहीं हजम कर सकते मगर, जीवन बेगार ढोने में अद्वितीय दिलचस्पी लेते हैं, अथक परिश्रम करते हैं। कवि-सम्मेलनों मे आपके पहुँचते ही कविता सुन्दरी घिघियाती हुई भाग खड़ी होती है।

4. *अमृतलाल चक्रवर्ती*–[*पुलिंग*] *आप हिन्दी-साहित्य के 'बहुहर' सेवक* हैं। कई पत्रों का सम्पादन कर चुके हैं तथा पचासों से अधिक होलियों में लाखों से अधिक गालियाँ खा चुके हैं। 'तुलसी बूढ़े बैल को कौन बाँधि भुस देइ', न्यायानुसार आजकल आपकी पूँछ बिलकुल छोटी हो गई है। कल के पैदा बहुत से छोकरे तो आपको जानते भी न होंगे।

5. अनूप शर्मा—[पुलिंग] आप साधारण लम्बे-चौड़े गोरे, ग्रेजुएट एण्ड एल० टी० हैं। आपने लखनौवे बाबू दुलारेलाल भार्गव के पीछे काम करने में काफी यश प्राप्त किया है। आपको कविता में वह कमाल हासिल है कि वर्त्तमान हिन्दी साहित्य के सैकड़ों कवि आपके ठीक पीछे हैं।

6. अन्नपूर्णानन्द—[पुलिंग, इधर चार-पाँच महीनों से उभयलिंगी] 'सभ्य भाषा में आप कृष्ण हैं, सीधी भाषा में काले और बदमाशी भाषा में *'जेट ब्लैक' हैं। कहने का मतलब यह है कि आप अपनी कालि के लिये भी* काफी प्रसिद्ध हैं। यू० पी० की युनिवर्सिटियों ने आपको दुमदार आदमी बनाने की भरपूर चेष्टा की थी, मगर आपने हमेशा यही कहकर उन दुमों को कालिजों की दीवारों में घिस-घिस दिया, कि जब तक जी० पी० श्रीवास्तव की दुम झड़ नही जाती, तब तक मैं दुमदार बनूँगा ही नहीं। एक जंगल में दो शेर नही रह सकते। आप कुछ लोगों की दृष्टि में निखट्टू हैं और कुछ की दृष्टि में—*'मंत्री श्री शिवप्रसाद गुप्त।'*

7. आनन्दिप्रसाद श्रीवास्तव—(नपुंसकलिंग) आप अभी महज लौंडे हैं। पहले जबलपुर की 'श्रीशारदा' में 'किरीट' नाम से कविता-सुन्दरी के कोमल-कलेवर में किरिच कोंपा करते थे। अब अभ्युदयादि इलाहाबादी पत्रों की मैटर-भर्ती अपने पूरे नाम से किया करते हैं। काफ़ी कलम-घिस्सू हैं। शायद अब तक आपने सैकड़ों महाकाव्य और लाखों खण्ड-काव्य लिखकर दीमकों को *समर्पण कर दिया होगा।*

8. इन्द्र विद्यावाचस्पति—(पुलिंग) आप प्रोफेसर हैं—गुरुकुल के, एडीटर हैं गत 'विजय' और वर्त्तमान 'अर्जुन' के, 'सन' हैं स्वर्गवासी स्वामी श्रद्धानन्द के, धन हैं—आर्य समाज के। न लम्बे हैं, न गोरे हैं, न सुन्दर हैं और न बद-शकल हैं। न जाने क्यों दढ़ियल आपसे दहला करते हैं।

9. ईश्वरीप्रसाद शर्मा—(पहले उभयलिंगी अब पुलिंग) आप हिन्दी के भयानक अनुवादक, वीभत्स दंतनिपोड़ और वीर (सम्पादकबनने के) प्रेमी हैं। किसी दूसरी भाषा की पुस्तक की 'जान' निकाल कर अपनी भाषा में डाल देना आपकी बायीं खोपड़ी का काम है। हँसी-मजाक के आप ऐसे प्रेमी हैं कि

उस क्षेत्र की गन्दी से गन्दी चीजें मुँह में भरे घूमा करते हैं। गद्य के अलावा आप पद्य भी लिखते हैं, जैसे—

खद्दर-चद्दर वाले हैं जो
वेश दरिद्दर वाले हैं जो
आफ़त के परकाले हैं जो
देश-नाशने वाले हैं जो
इनसे सदा रहो होशियार
मेरे भाई ! मेरे यार !!

10. कामताप्रसाद गुरु—(पुलिंग) आप प्रसिद्ध व्याकरण व्याघ्र हैं। कोई भी नाम सुनते ही उसका लिंग ढूंढ निकालते हैं। आप ही के मत से प्रयाग के श्री सुमित्रानंदन पंतजी 'स्त्रीलिंग' हैं।

11. किशोरीलाल गोस्वामी—(पुलिंग) आप सम्राटों के मजमूआ हैं। याने उपन्यास-सम्राट, कवि-सम्राट, हास्य-सम्राट, अश्लील-सम्राट, बकबक-सम्राट, आदि, आदि। बूढ़े हो गये हैं मगर अभी तक शृंगार-प्रकरण में पूरे गो-स्वामी हैं।

12. केदारनाथ सारस्वत—(पुलिंग) आप बिलकुल नवयुवती (ओ, आई बेग योर पार्डन) नवयुवक हैं, संस्कृत के अच्छे विद्वान् और सुलेखक हैं, भावुक हैं, भंगभक्षी हैं—पूरे क्षपसट हैं।

13. कृष्णकान्त मालवीय—(उभयलिंगी) आप हिन्दी जगत् के पड़सिद्ध एडीटर्र हैं, दुमदार भी हैं मगर दुम को पर्स में रखकर चलते हैं पीछे खोंसकर नहीं। आप आज के अनेक हिन्दी-लेखकों के 'चचा' हैं और आपके भी चचा हैं पण्डित मदनमोहन मालवीयजी ? पण्डित मोतीलाल नेहरू के प्रसाद से आप तीन वर्षों तक बड़ी कौंसिल की कुर्सी की छाती के भार भी रह चुके हैं। भाषा तूफ़ानी लिखते हैं, व्याख्यान उथल-पुथलकारी देते हैं। आप इलाहाबादी 'अभ्युदय' के यशस्वी प्रवर्त्तक हैं और आप ही की 'मर्यादा' बाबू शिवप्रसाद के हाथों में पड़कर चौपट हुई है। आपको सदा सोहागिन बने रहने का शौक है। 'वज़ीर' को आप 'जान' की तरह 'लव' करते हैं। याने मिनिस्टिरी के समर्थक हैं—कोई दूसरा अर्थ न समझ ले। हाँ आपका एक विख्यात गुण यह है कि यदि आप पान की 'भीट' में छोड़ दिये जायँ तो घंटे दो घंटे में खेत का खेत चर सकते हैं।

14. कृष्णदेवप्रसाद गौण—(उभयलिंगी) आप एम० ए० हैं, एल० टी० हैं, लंबे हैं, गोरे है, परम चाकलेट हैं, 'सरस' हैं, हसीस हैं, हुस्नपरस्त हैं, दिलदार हैं, एक खूबसूरत दिल्लगी हैं।

15. कृष्णविहारी मिश्र—(पुलिंग) आप दुलारेलालाकाश के दाड़ू-तारा हैं 'साहित्य-समालोचक' के एकमात्र सहारा हैं, छोटे हैं, कुछ मोटे हैं, वकील हैं, शायद सज्जन भी हैं। कवि नहीं हैं, केवल काव्य मर्मज्ञ हैं। मगर अकसर कविता-कानन में बटोर-बहार करते हैं। आप 'ज्ञानमण्डल' और 'माधुरी-मण्डल' दोनों में फेरी लगा चुके हैं। देव के भयानक समर्थक हैं और उनकी इस लाइन पर डेढ़-जान से फिदा हैं—'भोगहू ते कठिन सँजोग पर नारी को।' बाबू दुलारेलाल की अनुपस्थिति में आपने उनकी दुलारी 'माधुरी' का अभिभावक होना सहर्ष स्वीकार किया है।

16. गणेशशंकर विद्यार्थी—(पुलिंग) आप 'प्रताप' के सर्व-'मरवा' हैं। यू० पी० नौकरशाही के 'सगे हजवेण्ड' हैं। इस बार वोटरों की दया से एम० एल० सी० हैं। नादिरशाहों की नानी आपको देखकर मरा करती है। कहा जाता है कि आप ही का शरीर देखकर डॉक्टर एस० के० बर्मन को अपने साइनबोर्डों में एक अस्थिपंजरावशिष्ट पुरुष को दिखाने की बात सूझी थी।

17. गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही'—(उभयलिंगी) मनहूसों सा मुँह है, मगर बड़ी-बड़ी पटाखा-कविता-कामिनी के विख्यात जनक है। आप ही 'त्रिशूल' या 'शंकर' के हथियार है। देशी दूकानों के सभी 'बोसों' और विलायतियों के 'चाकलेट' आपको ज्यादा पसन्द हैं, ऐसा विद्यार्थी शान्तिप्रिय द्विवेदी का 'आब्जरवेशन' है। भविष्य की राम जानें, मगर आपका भूत साहित्यिक-युग 'वर्तमान' से 'बेटर' था।

18 गांगेय नरोत्तम शास्त्री—(पुलिंग) कविचक्र चूडामणि, मगर हिन्दी-कविता कामिनी-शृंगार-संहारक। भारी खिस-खिस, विकट गलफरानन्द।

19. गिरिधर शर्मा 'नवरत्न'—दुबले, पतले, लंबे, भाँदाकार हैं। आपकी सबसे अधिक ख्याति उमर खैय्याम और रवि ठाकुर की दुर्दशा करने के कारण हुई है। आप कविता क्या लिखते हैं साहित्य का गला घोंटते हैं। आप नवरत्न हैं—पत्थर हैं।

20. गोपालशरण सिंह—(पुलिंग) आप ताड़वत् लंबे और पहाड़वत तगड़े हैं। रीवा रियासत के लाखों के जागीरदार है। आपकी गठरीदार-प्रतिभा देखकर अनेक हिन्दी कवियों के मुँह में लारों का तूफान उठ खड़ा होता है। आप बहुत दिनों से कवि हैं और हमारा विश्वास है बहुत दिनों तक कविता की छाती पर सवार रहेंगे।

21. गोपालराम गहमरी—(असार लिंग) गहमरीजी हिन्दी-संसार में जासूसी करते-करते अब बिलकुल जुल जुल जासूस बन गये हैं। किसी जमाने में आपकी सीटी बोलती थी—अब संख बजता है।

22. चतुरसेन शास्त्री—(महापुलिंग) गद्य के घमासान गढ़क, कभी-कभी पद्य-पग तोड़क तथा तुक जोड़क; 'व्यभिचार-प्रचारक' भारी 'टाकू' आदि-आदि।

23 चन्द्रशेखर पाठक—(पुलिंग) अधेड़ावस्था के पार अनुवादों के अवतार, वारांगना-रहस्य-फोड़कों के सरदार, पाठक एण्ड को० के सरकार।

24. चण्डीप्रसाद हृदयेश—(पुलिंग) आप बी० ए० है, गल्प लेखक हैं और औपन्यासिक है। आपकी संस्कृत समलकृता भव्या-भाषा-भेजा-भेदिनी होती है।

25. जगन्नाथदास 'रत्नाकर'—(प्रचण्ड पुलिंग) आप सचमुच हिन्दी भाषा के दिग्गज—शरीर और खोपड़ी दोनों से विद्वान हैं। कुल्पनारायण की आप पर असीम कृपा है। लोगों का कहना है कि आप बीवी 'माधुरी' के नव्य बिहारी के 'द्विपदों' में अक्सर तेल लगाया करते हैं। आप अंग्रेजी के बी० ए० और ब्रजभाषा के आचार्य हैं।

26. जगन्नाथप्रसाद 'भानु'—(पुलिंग) एक शब्द में आप भारी पिंगल हैं।

27. जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी—(चाकलेट लिंग) चौबेजी हिन्दी-चन्द्र के चमचमाते चकोर हैं। आपकी आँखें आठो पहर अनुप्रास के अन्वेषण में ही अटकी रहती हैं। आपने लाहौर साहित्य-सम्मेलन की गद्दी पर अपना गौरव-मय गोल गाड़ा था। जिस साहित्यिक महफिल में आप नहीं रहते वह वीरान समझी जाती है।

28. जयशंकर प्रसाद—(उभय लिंग) आप कवि, नाटककार और गल्पक तो हैं ही, खिस-पिस भी भारी हैं।

29. जी० पी० श्रीवास्तव—(उजबक-लिंग) कहा जाता है, मरने के बाद फ्रांस के मोशिये मोलियर की आत्मा बरसों चारों ओर घूम-घूमकर अपने लिये एक दरबा खोज रही थी। अन्त मे वह हमारे जी० पी० श्रीवास्तवजी के भीतर जा घुसी। आप वकील और विद्वान् तो हैं ही भारी 'ह्यूमर' भी हैं। दुमदार आदमी भी है, मर्दानी औरत भी हैं। अब सुनते हैं आजकल आपकी खोपड़ी से मोलियर की आत्मा उतरी सी जा रही है। आपके पीछे हमेशा करोड़ों काम लगे रहते हैं।

30. ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल'—(नपुंसक लिंग) यह बीवी 'मनोरमा' के हरम के बेदम के रखवाले हैं। 'मतवाला' का और इनका बड़ा मधुर नाता है। उजबकई में आप पूरे प्रयाग मे प्रख्यात हैं। कविता सुन्दरी के दो-चार सुन्दर पाद आपके माथे में हमेशा ही भरे रहते है।

31. दशरथप्रसाद द्विवेदी—(पुलिंग) आप गोरखपुरी 'स्वदेश' के जेल-जानक संपादक हैं। कलम पर आपका एकाधिकार है, अवस्था पैंतीस के पार है। आपकी अजीबोगरीब खोपड़ी में 'स्कीमों' की भरमार है। जैसी चाहिये, जो चाहिये, जब चाहिये तैयार है। आप 'स्वदेश' को जी-जान से सजाते हैं और अपनी गरीब शक्तियों को लेकर अच्छे-अच्छे अमीरों को लजाते हैं।

32. दीनदयाल शर्मा—(सनातन लिंग) चतुरानन्द ने आपको रचने के पहले एक भैंसा रचा था। उसी 'मेण्टलिटी' में आपका भी निर्माण होने से आप कुछ-कुछ तदाकार हो गये हैं। सनातन-धर्म के आप सनाजन्म ठेकेदार हैं। आदर्शों के नाम पर आप गरजते हैं विकट-बाघ की तरह, मगर जरूरत पड़ने पर बरसते हैं खाली बन्दूक की तरह। सुना है आपका मत है कि चालीस हजार की गठरी का दाता महान् पतित, नारकी और हत्यारा होने पर भी पुरुषोत्तम कहा जा सकता है। संसार-स्टेज पर आपका ड्रामा प्रायः समाप्त हो चला है—आप घोर ओल्ड हैं।

33. दुलारेलाल भार्गव—(ह्विजी लिंग) दुबले हैं, अध-पतले हैं, नमकीन है, हिन्दी के अभिमानी सेवक हैं, अपने को जरूरत से ज्यादा लगानेवाले हैं, 'माधुरी' के फादर है, पण्डित अनूप शर्मा के प्यारे बिरादर हैं, गंगा-पुस्तक-माला वाले हैं और हिन्दी कवियों के अब क्या कहे? सुना है रत्नाकरजी की कृपा से आप महाकवि बिहारी के टक्कर के दोहाकार हो गये हैं। आपके दोहे के चन्द उदाहरण—

मेरी भव बाधा हरौ परी-माधुरी प्यारि,
नीके हैं छीके हुए ऐसी ही रह नारि।
सखी सिखावति मान विधि, सैननि बरजति बाल,
'ह्विस्पर' कर मो मने बसै, सदा दुलारेदाल।
जरी हरी आशा लता, 'प्रेम', 'कृष्ण' दोउ टूट
हरी परी माधुरी प्रिय, करी खरी रस लूट?

34. नवजादिक लाल—(भ्रष्ट पुलिंग) आप भी 'चालीसा' का विक्टोरिया-क्रास वाली उम्र के मैदान में पा चुके हैं। कोड़ियों किताबों के टायटिल पेज पर हजारों बार चिपक चुके हैं। 'मतवाला' एडीटर की हैसियत से 'ब्युटीफुली' बहक चुके हैं। मगर आपकी अधिक शुहरत का कारण आपकी बीवियाँ हैं। आप 'आल्टर्नेट इयर्स' बीवी बदल लिया करते हैं।

35. नरदेव शास्त्री—(पुलिंग) दाढ़ियाँ आपसे दाढ़ी सी रहा करती हैं—आप 'आरिया' हैं। लाल पगड़ियों की आखें आपकी ओर लाल-लाल रहा

करती हैं—आप बलवाई हैं। नामधारी नेता आपसे नकियाये रहते हैं—आप एडीटर—शंकर हैं। बड़े भयानक जीव हैं।

36. पद्मसिंह शर्मा—(पुलिंग) आप हिन्दी संसार के झंझावात है। एक बार हवा होकर बहे उखाड़-पछाड़ किया। हाहाकार उपस्थित किया और शान्त हो गये।

37. परिपूर्णानंद—(स्त्रीलिंग) आप शुद्ध चाकलेट 'कलर' के है। श्री संपूर्णानंदजी के छोटे भाई हैं। प्रेम महाविद्यालय के पुजारी हैं, भारी बक-बक हैं, गल्पू हैं, उपन्यासू हैं और नाटकू भी है।

38. पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'—(उभयलिंगी) आप देश, साहित्य और स्वराज्य सबसे अधिक अपनी जुल्फों को प्यार करते हैं। सखी-भाव में रहना आपको ज्यादा पसन्द है। आप 'चाकलेट' शब्द के भारत-विख्यात निर्माता और दर्जनों चाकलेट-स्टोरियों के विधाता हैं। चाकलेट भी हैं और चाकलेटो के कमाण्डर-इन-चीफ भी। झूठी-मूठी कहानियां लिखने के लिए आप काफी बदनाम हैं।

39. प्रेमचंद—(पुलिंग) आप ही वर्त्तमान हिन्दी औपन्यासिकों के माथे पर के काँटेदार ताज हैं। कितनों की आँखो में खटकते है। आपके नाम का 'इनलार्ज फार्म' है—श्री धनपत राय बी० ए। आप 'माधुरी' जनक बाबू दुलारेलाल के फ्रेंण्ड हैं और आप ही ने अब 'माधुरी' को अपने गार्जियनशिप में लिया है। आपने नाटक के मैदान में भी दौड़ने की चेष्टा की थी, मगर सुना है, चारो खाने चित्त गिर पड़े थे। कलम घिस-घिस में आपको भी कमाल हासिल है। साल में दर्जनो किताबे कांख देते हैं।

40. बदरीनाथ भट्ट—(उभय लिंगी) आप लखनऊ युनिवर्सिटी के प्रोफेसर है—बस इतने ही से आपका शुद्ध परिचय मिल सकता है। दंतनिपोरई मे आपको खासी इज्जत मिली है। आपके शिर पर अक्सर 'कवितास' भी चढ़ती है—कभी अच्छी, कभी अनच्छी। आप नाटककार भी भारी है, मगर वैसे ही जैसे पारसी स्टेज के 'जोहरजी'।

41. बाबूराव विष्णु पराड़कर—(पुलिंग) आप बनारसी 'आज' के संपादक हैं, मनहूसी के लिये मशहूर हैं और साथ ही, चालीसा लग जाने पर विधवा-विवाह के मजेदार-मैदान मे छलाँगें मारने के लिये यशस्वी हैं। हिन्दी के, खासकर काशी के, कितने अखबार केवल आपका नाम लेकर अपना जीवन धन्य बनाया करते हैं।

42. बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'—(उभयलिंगी) आप सुंदर हैं, सुंदर देश-सेवक हैं, सुंदर लेखक हैं और सुंदर कवि भी हैं। हुस्नपरस्ती आपकी आदत

है और बुतपरस्ती पेशा। चार यारों के बीच में आप बहुत अच्छे लगत

43. विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक'—(उभयलिंगी) कानपुर के साहित्यिक-भंगियो के आप प्यारे सखा हैं। 'कौशिकजी' के नाम प्रसिद्ध है जिसका संस्कृत अर्थ बडा विचित्र होता है। आप मशहूर गल्प ग

44. विश्वम्भरनाथ जिज्जा—(उद्धत लिंग) आप जो कुछ ही है हैं। भारी लिक्खू, भारी गल्पू, भारी लम्बक, भारी भंगक और गिनाएँ? सुना है ऐसा कोई दिन नही जाता जिस दिन, किसी न किस शेविक की आत्मा आपकी खोपडी पर चढकर आपको घंटे दो घंटे न वाली' हो।

45. विनोदशंकर व्यास—(उभयलिंगी) आप हिन्दी के उभडते हु मुण्डे हैं। बाबू जयशंकर प्रसादजी आपको नीचे से ऊपर तक जानते है

46 महादेवप्रसाद सेठ—(पुलिंग) आप 'मतवाला' के मशहूर एडीटर हैं। दाढियो के मूल मे घुन बनकर घुसने मे आपको 'जेलानन्द चुका है। पहुँचे हुए संपादक हैं। निराली प्रतिभाओं के पीछे आप चा से दौडते है। इस वक्त आप बुढापा और जवानी के बीच मे खड़े होकर ठीक कर रहे है।

47. माधव शुक्ल—(पुलिंग) आप नाटक भी है, नट भी, गायन गान भी, साहित्यिक भी है, साहित्य भी, दीवाने भी है, होशियार भी

48. माखनलाल चतुर्वेदी—(स्त्रीलिंग) आप मूक पहेली से सुन अन्धकार पूर्ण संसार में भाव-जुगनूमयी कविताएँ प्रसव किया करते है। और 'प्रभा' को भरपेट संपाद चुके है। आजकल 'कर्मवीर' में पैतरे ब है। आप, सुना है 'दिल' भी रखते हैं।

49. मिश्रबन्धु—(बहु-लिंगी) आप लोगों के फुलबेंच में तीन हिन्दी रथी है (i) पण्डित गणेशबिहारी मिश्र (ii) पण्डित श्यामबिहारी मिश (iii) रायबहादुर पण्डित शुकदेवबिहारी मिश्र। आप लोग सैकड़ो लेखको के 'श्रद्धेय' हैं। एक शब्द में आप हिन्दी साहित्य की रागिनी हैं।

50 मुन्छन द्विवेदी—(बटुक-लिंग) आप सनसना कर सनकते औ बमा कर बमकते हैं। आपने अपने 'मुन्छन' को, अपने 17-18 वर्षों के मे, साढे तीन बार छीला-खरादा है। अब उसका शुद्ध-रूप श्री शा द्विवेदी के रूप मे प्रकट हुआ है। जरा भी भाव का जुलाब मिलते ही अ प्रतिभा महीनो तक 'पोका' करती है।

51 मैथिलीशरण गुप्त—(पुलिंग) आप वर्तमान खडी बोली की के खलमिश्र हैं। मधुर भी हैं, कर्कश भी। कवि भी हैं, तुक्कड़ भी!

52 रघुपति सहाय—(अजीव लिंग) आप हजारों में एक बी० ए० हैं, खूब नवयौवन है, आँखें खुलती ही नहीं, पूरा छायावाद। Sheयों से अधिक Heयों को 'इम्पोर्टेन्स' देने वाली उर्दू शायरी के आप मास्टर हैं! एक शब्द में आप एक नमकीन शेर है।

53. रमाशंकर अवस्थी—(नपुंसक लिंग) आप कनपुरिया 'वर्तमान' के मूक 'भूत' और 'सतर्क' भविष्य हैं।

54. रायकृष्ण दास—(उभयलिंगी) आप भयानक भावुक हैं। भाव-साहित्य-समुद्र में अक्सर डुबकियाँ लगाया करते हैं। फलतः आपके हाथों में कभी-कभी साहित्य मुक्ता भी दिखाई पड़ते हैं, मगर अधिक तादाद शंखों और घोंघों की ही होती है।

55. रामनरेश त्रिपाठी (पुलिंग) आप राष्ट्रभाषा सब गुन आगरी नागरी के वणिक-पुत्र हैं। 'लण्डन टाइम्स' में एक बार पढ़ा था कि 'एलाहा-बाड का पण्डत रामनरेश त्रिपाठी चूरन का लटका आच्चा लिक लेटा हाय।' आप हिन्दी के 'खण्ड' कवि है। बड़े मीठे हैं।

56. रामचन्द्र शुक्ल—(मौन-लिंग) हिन्दू विश्वविद्यालय की भाषा के 'बौविंग फिलासफर' हैं, विद्वतसमाज की भाषा में आप 'गम्भीर' हैं, रायसाहब बाबू श्यामसुन्दर दास की भाषा में आप 'सर्वस्व' हैं; हमारी भाषा में आप 'धन्य' के 'फालस' है।

57. रामचन्द्र वर्मा—(पुलिंग) आप काशी नागरी-प्रचारिणी-सभा के लवण ही हैं। क्या नमकीन तबीयत पायी है। आप ही की कृपा से हिन्दी-शब्द-सागर-कोष का पानी बरकरार है।

58. रामचरित उपाध्याय—(पुलिंग) आप भारी महाकवि है। आपकी महा-कविता 'सरस्वती' में हर महीने मिल-मिलाया करती है।

59, राधेश्याम कथावाचक—[उभयलिंगी] आप अपने को नाटककार भी कहते हैं, कवि भी। यदि जौहर और शैदा नाटककार कहे जायँ तो राधेश्यामजी उनसे पहले नाटककार हैं। कविता तो क्या आप कविता की नीटकी रचा करते हैं। महाकवि शंकरजी ने 'डींग राधेश्याम से कथक्कड़ों की फीकी है' लिखकर आपको अमर कर दिया है। इसमें कोई शक नहीं कि आप नमकीन वक्ता हैं। हजारों और लाखों के नीचे बोलते ही नहीं।

60. रामवृक्ष शर्मा 'बेनीपुरी'—[अभी अवस्था नहीं] आप हैं तो वर्षों के मगर बनते हैं 'बालक'। 'मिठाई' की तरह गद्य लिखते हैं और 'खिलौने' की तरह कविता। आपके 'बालक' पन पर सैकड़ों साहित्यिक फिदा हैं।

61. रामनाथलाल 'सुमन'—[नपुंसक लिंग] कहा जाता है एक बार

सुमनजी को किसी आबनूस ने देख लिया। उफ !! आफत आ गई गरीब पर—बेचारा बिलकुल ब्लैंक पड़ गया। आप संसार की ठेलों भाषा के पण्डित हैं। 'बायरन' और 'कीट्स' से आपका पत्र-व्यवहार होता है। 'मिल्टन' और 'शेली' ने आपको लण्डन में बुलाया है। आप लंबे बिलकुल नहीं हैं। खाली चौड़े ही चौड़े हैं। आपको भी बहुतों की तरह अक्सर 'प्रियतम' रोग हुआ करता है।

62. रामाज्ञा द्विवेदी—[उभय लिंग] आप बड़े भारी 'अंग्रेजी' हैं, कविता उडावन कला के आप 'स्पेशलिस्ट' हैं। सुना है वात रोग भी अक्सर उभडा करता है। आप जब अंग्रेजी पोशाक धारण करते हैं तब बड़ा मजा आता है! भ्रम होने लगता है।

63 रूपनारायण पांडेय—[भ्रष्ट-लिंग] आप ही 'माधुरी' के प्रसवक नम्बर—2 हैं। साहित्य मे आपकी ख्याति अन्धाधुन्ध अनुवादने से हुई है। कविता का कचूमर निकालने में आपको मजा आता है। आप बाबू दुलारेलाल के दाहिने···।

64. लाला भगवानदीन—[पुलिंग] आपको 'गुरु' बनने का रोग है। काशी का सारा 'गुरुडम' आप ही के पास बिखरा पड़ा रहता है। ब्याह करने में आप मुंशी नवजादिकलालजी से फ़र्लांगों और पराड़करजी से योजनों आगे हैं।

65. सकलनारायण शर्मा—[जरठ लिंग] आप 'शिक्षा' ;के सुधारक है, हिन्दी भाषा के कर्त्ता; कर्म, करण, सम्प्रदान हैं, तीन गो 'तीर्थ' है, योगी हैं, कुण्डलिन चढा लेने वाले हैं और 'जो है सो' हैं।

66. सम्पूर्णानन्द—[पुलिंग] आप भी काले हैं, श्रृंगार रस की तरह। चूकनेवाले चाचा चतुरानन आपके जाति निर्माण मे ही चूक कर गये हैं। आप ऐसे चतुष्कोण ब्राह्मण को 'लाला' बना दिया है। आप बी० एस-सी० और एल० टी० हैं तथा प्रचण्ड पण्डित हैं। बीवी नौकरशाही है। आप पर हजार जान से निसार रहती है। आप एम० एल० सी० भी हैं। अभी कल आपने भी दूसरी शादी की है। आप बड़े इन्द्रिय-दमनी भी हैं। कोषकार का भ्रम है कि आप ग्रेट आदमी हैं, मगर केवल महीने में दो या तीन रोज।

67. श्यामसुन्दरदास—[नपुसक लिंग] आप हिन्दी साहित्य के 'अनुदार' इतिहास हैं। हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रवीण प्रोफेसर है। पण्डित रामचन्द्र शर्मा के 'आदान-प्रदान' हैं। हिन्दी सेवी होकर भी और इस सूर्यास्त काल मे टाई-शू और पेंण्ट हैं।

68. सियारामशरण गुप्त—(उभयलिंगी) देखने मे आप बिलकुल

सियारामशरण नही मालूम पड़ते। अभी महज कच्ची उम्र है। मगर आप हजारों में एक तुक्कड़ हैं।

69. श्रीधर पाठक—(ओल्डलिंग) हिन्दी साहित्य के पुराने मधुकर हैं। एक दिन ऐसा भी था जब चारों ओर आप ही आप नजर आते थे। अब लोगों की नजरों पर 'बदली' का परदा चढ़ गया है। आप कम नजर आते हैं।

70. श्री कृष्णदत्त पालीवाल—(शुद्ध पुलिंग) आप एम० ए० हैं, साहित्य-रत्न हैं, 'प्रताप' और 'प्रभा' के भूत सम्पादक हैं, कानपुर के मशहूर 'एजीटेटर' हैं और आजकल आगरा के सुन्दर सहयोगी 'सैनिक' के तड़ातड एडीटर हैं। हाँ, वर्त्तमान चुनाव के पहले आप एम० एल० सी० भी थे मगर इस बार की चढ़ाई में फील्ड आपके हाथों से निकल गया। 'सनेहीजी' के तो आप भक्त सुने गये हैं, मालूम नही उनके 'च्वायसों' के भी भक्त है या नही।

71. सुदर्शन—(अज्ञात लिंग) अधिक नही एक शब्द मे आप मुंशी धनपतराय की शुद्ध स्टाइल हैं।

72. सुमित्रानन्दन पंत—(स्त्रीलिंग) यद्यपि आपका रंग 'चाकलेट' नहीं है फिर भी, हजारों चाकलेट आपका मुँह ताका करें। कनक-छरी सी काया पायी है। 'कपि' कलर के काकुल पाये हैं 'मुग्धा की सी मृदु मुस्कान' पायी है। आप अपनी अनोखी कविताओं मे लिंगों को तोड़ने-मरोड़ने के लिये मशहूर है। साहित्यिक पकी दाढ़ियाँ आपको 'छोकरा' समझती हैं और अपने राम 'छोकरी'।

73. सूर्यकान्त त्रिपाठी—(पुलिंग) आप ही 'निराला' हैं। अपनी अनगढ़-रागिनी से आप ही ने 'मतवाला' के प्यालों में एकबार तूफान पैदा किया था। आप देखने मे कवि से अधिक 'कॉपर' मालूम पड़ते हैं। आप 'रवि बाबू' और डी० एल० राय के मिक्सचर भी कहे जा सकते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि आप उजबकाचार्य पण्डित शान्तिप्रिय द्विवेदी (मुच्छन) के गुरु हैं।

74. शिवप्रसाद गुप्त—(वीभत्स पुलिंग) आपका शुद्ध 'डिस्क्रिप्शन' पेश करना मुश्किल जो नही है तो फिर आसाँ भी नहीं है। दूर से आप 'रुई की गाँठ' की तरह दिखाई पड़ते हैं। आपकी गाँठ टटोलनेवाले खाली काशी में ही नही तमाम यू० पी० में और खाली यू० पी० में ही नहीं 'होल इण्डिया' में भरे पड़े हैं। लोगों का कहना है कि आप अगड़बम्म-भोला-बाबा की तरह उदार और औढरदानी हैं। काशी की जागृति के आप जाग्रत इतिहास हैं। आप पक्के नो-चेन्जर थे, मगर गत चुनाव में 'आज' के भूत-एडीटर-दार्शनिक-

सुमनजी को किसी आबनूस ने देख लिया। उफ़ !! आफत आ गई गरीब पर—बेचारा बिलकुल ब्लैंक पड़ गया। आप संसार की ठेलों भाषा के पण्डित हैं। 'बायरन' और 'कीट्स' से आपका पत्र-व्यवहार होता है। 'मिल्टन' और 'शेली' ने आपको लण्डन मे बुलाया है। आप लंबे बिलकुल नहीं हैं। खाली चौड़े ही चौड़े हैं। आपको भी बहुतों की तरह अक्सर 'प्रियतम' रोग हुआ करता है।

62. रामाज्ञा द्विवेदी—[उभय लिंग] आप बड़े भारी 'अंग्रेजी' हैं, कविता उड़ायन कला के आप 'स्पेशलिस्ट' हैं। सुना है वात रोग भी अक्सर उभड़ा करता है। आप जब अंग्रेजी पोशाक धारण करते हैं तब बड़ा मजा आता है ! भ्रम होने लगता है।

63. रूपनारायण पांडेय—[भ्रष्ट-लिंग] आप ही 'माधुरी' के प्रसवक नम्बर—2 हैं। साहित्य में आपकी ख्याति अन्धाधुन्ध अनुवादने से हुई है। कविता का कचूमर निकालने में आपको मजा आता है। आप बाबू दुलारेलाल के दाहिने'''।

64. लाला भगवानदीन—[पुलिंग] आपको 'गुरु' बनने का रोग है। काशी का सारा 'गुरुडम' आप ही के पास बिखरा पड़ा रहता है। ब्याह करने में आप मुंशी नवजादिकलालजी से फ़र्लांगों और पराडकरजी से योजनों आगे हैं।

65. सकलनारायण शर्मा—[जरठ लिंग] आप 'शिक्षा' ;के सुधारक हैं, हिन्दी भाषा के कर्त्ता; कर्म, करण, सम्प्रदान हैं, तीन गो 'तीर्थ' हैं, योगी हैं, कुण्डलिन चढ़ा लेने वाले हैं और 'जो है सो' हैं।

66 सम्पूर्णानन्द—[पुलिंग] आप भी काले हैं, शृंगार रस की तरह। चूकनेवाले चाचा चतुरानन आपके जाति निर्माण में ही चूक कर गये हैं। आप ऐसे चतुष्कोण ब्राह्मण को 'लाला' बना दिया है। आप बी० एस-सी० और एल० टी० हैं तथा प्रचण्ड पण्डित हैं। बीबी नौकरशाही है। आप पर हजार जान से निसार रहती है। आप एम० एल० सी० भी हैं। अभी कल आपने भी दूसरी शादी की है। आप बड़े इन्द्रिय-दमनी भी हैं। कोषकार का भ्रम है कि आप ग्रेट आदमी हैं, मगर केवल महीने में दो या तीन रोज।

67. श्यामसुन्दरदास—[नपुंसक लिंग] आप हिन्दी साहित्य के 'अनुदार' इतिहास हैं। हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रवीण प्रोफेसर हैं। पण्डित रामचन्द्र शर्मा के 'आदान-प्रदान' हैं। हिन्दी सेवी होकर भी और इस सूर्यास्त काल मे टाई-सू और पैण्ट है।

68. सियारामशरण गुप्त—(उभयलिंगी) देखने में आप बिलकुल

सियारामशरण नहीं मालूम पड़ते। अभी महज कच्ची उम्र है। मगर आप हजारों में एक तुक्कड़ हैं।

69. श्रीधर पाठक—(ओल्डलिंग) हिन्दी साहित्य के पुराने मधुकर हैं। एक दिन ऐसा भी था जब चारों ओर आप ही आप नजर आते थे। अब लोगों की नज़रों पर 'बदली' का परदा चढ़ गया है। आप कम नज़र आते हैं।

70. श्री कृष्णदत्त पालीवाल—(शुद्ध पुलिंग) आप एम० ए० हैं, साहित्य-रत्न हैं, 'प्रताप' और 'प्रभा' के भूत सम्पादक हैं, कानपुर के मशहूर 'एजी॰टेटर' हैं और आजकल आगरा के सुन्दर सहयोगी 'सैनिक' के तड़ातड़ एडीटर हैं। हां, वर्त्तमान चुनाव के पहले आप एम० एल० सी० भी थे मगर इस बार की चढ़ाई में फील्ड आपके हाथों से निकल गया। 'सनेहीजी' के तो आप भक्त सुने गये हैं, मालूम नहीं उनके 'च्वायसों' के भी भक्त हैं या नहीं।

71. सुदर्शन—(अज्ञात लिंग) अधिक नहीं एक शब्द में आप मुंशी धनपत-राय की शुद्ध स्टाइल हैं।

72. सुमित्रानन्दन पंत—(स्त्रीलिंग) यद्यपि आपका रंग 'चाकलेट' नहीं है फिर भी, हजारों चाकलेट आपका मुंह ताका करें। कनक-छरी सी काया पायी है। 'कपि' कलर के काकुल पाये हैं 'मुग्धा की सी मृदु मुस्कान' पायी है। आप अपनी अनोखी कविताओं मे लिंगों को तोड़ने-मरोड़ने के लिये मशहूर हैं। साहित्यिक पकी दाढ़ियां आपको 'छोकरा' समझती हैं और अपने राम 'छोकरी'।

73. सूर्यकान्त त्रिपाठी—(पुलिंग) आप ही 'निराला' है। अपनी अनगढ़-रागिनी से आप ही ने 'मतवाला' के प्यालों में एकबार तूफान पैदा किया था। आप देखने में कवि से अधिक 'कोंपर' मालूम पड़ते हैं। आप 'रवि बाबू' और डी० एल० राय के मिक्सचर भी कहे जा सकते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि आप उजबकाचार्य पण्डित शान्तिप्रिय द्विवेदी (मुच्छन) के गुरु हैं।

74. शिवप्रसाद गुप्त—(वीभत्स पुलिंग) आपका शुद्ध 'डिस्क्रिप्शन' पेश करना मुश्किल जो नहीं है तो फिर आसां भी नहीं है। दूर से आप 'रुई की गाँठ' की तरह दिखाई पड़ते हैं। आपकी गाँठ टटोलनेवाले खाली काशी में ही नहीं तमाम यू० पी० में और खाली यू० पी० में ही नहीं 'होल इण्डिया' में भरे पड़े हैं। लोगो का कहना है कि आप अगड़बम्ब-भोला-बाबा की तरह उदार और औढरदानी है। काशी की जागृति के आप जाग्रत इतिहास हैं। आप पक्के नो-चेन्जर थे, मगर गत चुनाव में 'आज' के भूत-एडीटर-दार्शनिक-

प्रवर श्रद्धेय बाबू भगवानदास जी के फर्स्ट पिसरे लण्डनी वैरिस्टर, भैय्या जी बाबू श्री प्रकाश के लिये आप भी स्वराजियों के गोल में आकर—काफिर बन गये ! कोई करे क्या !—'बुरो है वालेपन को नेह ।'

75 शिवपूजन सहाय—(स्त्रीलिंग) आप कुछ दिनों तक अध्यापक तथा बहुत दिनो तक आरा की एक छोटी लाइन के गार्ड रह चुके हैं, अस्तु, वटुक-विलसित है । चमेली के फूल की माला की तरह भाषा लिखते हैं । आपकी अवस्था तीस-एकतीस के ऊपर नीचे है ।

76 हनुमान प्रसाद पोद्दार—(उभय लिंगी) आप कलकत्ते के भारी आदमी हैं । हाँ, हाँ ! आदमी ही से हैं ! खूब 'सासी' शकल पायी है । कलकत्ता कवि-सम्मेलन के आप ही संयोजक है ।

77. हरिकृष्ण 'जौहर'—(नपुसक लिंग) आप पहले हिन्दी के सम्पादक थे, अब पारसी स्टेज के 'छीछालेदरक' हैं । हजारों नाटको को फाँक गये हैं, मगर आप स्वयं जो लिखते वह शुद्ध घोघा-पंथी होता है ।

78. हरिशंकर शर्मा—(पुलिंग) महाकवि शंकरजी के सुपुत्र, आर्यमित्र के एडीटर-खूब लेखक और बहुत खूब कवि हैं ।

79. हेमचन्द्र जोशी—(उभयलिंग) राय साहब, श्यामसुन्दर दास आपको लौंडा समझते हैं क्योंकि आपने उनको एक बार घिसा था । प्रेमचन्दजी आपको आफत समझते हैं क्योंकि, उन पर भी आप टूट चुके हैं । स्वामी सत्यदेव परिव्राजक आपको 'लुच्चा' और 'आवारा' और 'खुफ़िया' समझते हैं क्योंकि, आप स्वामी जी के ढोंग में सहायक नही होते । हम आपको हिन्दी का उज्ज्वल घोंघा समझते है ।

80. हेड़म्ब मिश्र—(नपुंसक लिंग) आप कई पत्रों को, खासकर काशी के 'केसरी' को 'एडिट' करने के बाद अब 'सूर्य' को सम्पाद रहे हैं । बरे योग्य मित्र, भाड़ी लिक्खाड और औधे संपादक हैं ।

[वर्ष 4, संख्या 4—12 मार्च, 1927]

□□

नवाविष्कृत गणित-सिद्धांत

[योग-वियोग की महिमा]

राम-प्रवेश

मधुशाला	+	माधुरी	=	बच्चन
दुलारेलाल	+	दोहावली	=	महाकवि बिहारीलाल
प्रेमचन्द	+	अवध उपाध्याय	=	समालोचना
[illegible]	+	बदरीनाथ भट्ट	=	[illegible]
[illegible] शर्मा	+	द्वारिकाप्रसाद चतुर्वेदी	=	हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन
निराला	+	छन्द	=	छायावाद
[illegible] गुप्त	+	कविता	=	[illegible]
[illegible]	+	राजा-महाराजा	=	रामनरेश त्रिपाठी
[illegible]	+	पत्थरों की छींटे?	=	[illegible]
किशोरीलाल गोस्वामी	+	[illegible] चित्र	=	बनारस की ठगी?
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	रु० 40000
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	—	[illegible]	=	General Manager [illegible]
[illegible]	+	[illegible]	=	[illegible]
[illegible]	—	[illegible]	=	[illegible]

प्रवर श्रद्धेय बाबू भगवानदास जी के फर्स्ट पिसरे लण्डनी वै
बाबू श्री प्रकाश के लिये आप भी स्वराजियों के गोल में आ
गये ! कोई करे क्या !—'बुरो है बालेपन को नेह।'

75 शिवपूजन सहाय—(स्त्रीलिंग) आप कुछ दिनों त
बहुत दिनों तक आरा की एक छोटी लाइन के गार्ड रह चु
विलसित हैं। चमेली के फूल की माला की तरह भाषा
अवस्था तीस-एकतीस के ऊपर नीचे है।

76. हनुमान प्रसाद पोद्दार—(उभय लिंगी) आप द
आदमी है। हाँ, हाँ ! आदमी ही से हैं ! खूब 'मासी' शकल
कवि-सम्मेलन के आप ही संयोजक है।

77 हरिकृष्ण 'जौहर'—(नपुंसक लिंग) आप पहले
थे, अब पारसी स्टेज के 'छीछालेदरक' है। हजारों नाट
मगर आप स्वयं जो लिखते वह शुद्ध घोघा-पंथी होता है।

78. हरिशंकर शर्मा—(पुंलिंग) महाकवि शंकरजी
के एडीटर-खूब लेखक और बहुत खूब कवि हैं।

79. हेमचन्द्र जोशी—(उभयलिंग) राय साहब, श्या
लौंडा समझते हैं क्योंकि आपने उनको एक बार धि
आपको आफत समझते हैं क्योंकि, उन पर भी आप
सत्यदेव परिव्राजक आपको 'लुच्चा' और 'आवारा' औ
क्योंकि, आप स्वामी जी के ढोंग मे सहायक नही होते
का उज्ज्वल घोंघा समझते हैं।

80. हेड़म्ब मिश्र—(नपुंसक लिंग) आप कई पत्रों
के 'केसरी' को 'एडिट' करने के बाद अब 'सूर्य' को सम्
मित्र, भाड़ी निकम्माड औड औंधे संपादक हैं।

[वर्ष 4, संख्या 4

परिशिष्ट

साइनस-माया

दुलारेलाल	—	माधुरी	= 0
माधुरी	—	मतवाला	= 0
महामंडल	—	ज्ञानानन्द	= 0
स्वराज पार्टी	—	नेहरूजी	= 0
सनातन धर्म	—	भ्रूणहत्या	= 0
ब्रिटिश गवर्नमेण्ट	—	डिप्लामेसी	= 0
बारिस्टरी	—	यंग लेडी	= 0
इसलाम	—	छूरा	= 0
मारवाड़ी	—	विदेशी व्यापार	= 0
कलकत्ता	—	सोनागाछी	= 0
लखनऊ	—	चाकलेट	= 0
बनारस	—	दाल की मंडी	= 0
पटना	—	गंदगी	= 0
कांग्रेस	—	वकील-दलील	= 0
महंत	—	मालपूआ	= 0
टीचर	—	बटुकोपासना	= 0
देशभक्त	—	लेक्चर	= 0
लेखक	—	चश्मा	= 0
सम्पादक	—	ऐंठ	= 0
सुन्दरी	—	सिन्दूरबिन्दु	= 0
जोरू	—	साला	= 0
हिन्दू-परिवार	—	बाल-विधवा	= 0
महामहोपाध्याय	—	चापलूसी	= 0
सुशिक्षित	—	बुलबुलाहट	= 0
कॉलेज छात्र	—	दरबार सिगरेट	= 0
अँगरेज-जाति	—	बन्दरघुड़की	= 0
साहित्य-सम्मेलन	—	दलबन्दी	= 0
सनातनधर्म मंडल	—	भारतमित्र	= 0
लिहाफ	—	बाबी	= 0
होली	—	साला	= 0

[वर्ष 4, संख्या 40—12 मार्च, 1927]

□□

परिशिष्ट

परिशिष्ट

इसके अंतर्गत वैसी रचनाएँ हैं जो दोनों विशेषांकों के अतिरिक्त अंकों से ली गई हैं। खास तौर से वे रचनाएँ दोनों विशेष सामग्री से ज्यादा नजदीक थीं—इस नाते एक क्रम में वे ज्यादा अर्थवान साबित होंगी।

पैसा

यही है वह नजर जिसमें गरूर और जुल्म पलते हैं।
यही नौका है जिसमें पाप के औज़ार ढलते हैं ॥1॥
यही पारा है जिसमें आत्मीयता डूब जाती है।
यही सोना है जिसमें जुर्म के दरिया निकलते हैं ॥2॥

गरीबी बीबी का गरूर

वफ़ायें मेरा मुख नेकी मेरा 'मंजीन-ए-ज़र' है।
हया पोशाक मेरी औ' मुहब्बत मेरा ज़ेवर है ॥1॥
गरीबी में भी हँस पड़ती है नेकी मालवालों पर।
मेरी खद्दर की चादर थूक देती है दुशालों पर ॥2॥

['नूर']

[वर्ष 1, संख्या 23—26 जनवरी, 1924]

□□

धर्म कर्म की धूम मचाकर कलि को कर दूँ दूर,
पृथ्वी पर ही स्वर्ग दिखा दूँ, करूँ दलिद्दर दूर—
के दाम, नाम का नाम !
हरी मुझे दिलो दो राम ॥3॥

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

□□

का नगाड़ा

[चौपटानन्द शास्त्री]

चारों ओर मचा अन्धेर।
मिले नहीं सज्जन को बेर ॥1॥
सब मिल पूजें उनके पैर।
हो नही दिखलाती खैर ॥2॥
पा जाते हैं लण्ठ लबार।
क्यों चन्दा जायें नही डकार ? ॥3॥
भरमाया लोगों को खूब।
दुनिया को लूटा है खूब ॥4॥
असहयोग की थाम लगाम।
की, हुए आप पूरे बदनाम ॥5॥
किया, हुए बस मालामाल।
अब हैं पूरे बने दलाल ॥6॥
उसमें पाये पाँच हजार।
रुपये खाये बीस हजार ॥7॥
उनकी बदनामी का ढोल।
निकलता मुँह से बोल ॥8॥

होली

[पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय]

खेलो रंग अबीर उड़ावो लाल गुलाल लगावो ।
पर अति सुरँग लाल चादर को मत बदरंग बनाओ ।
न अपना रंग गँवाओ ॥
जनम-भूमि की रज को लेकर सिर पर ललक चढ़ाओ ।
पर अपने ऊँचे भावों को मिट्टी में न मिलाओ ।
न अपनी धूल उड़ाओ ॥
प्यार उमंग रंग में भीगो सुन्दर फाग मचाओ ।
मिलजुल जी की गाँठें खोलो हित की गाँठ बँधाओ ।
प्रीति की बेलि उगाओ ॥

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

□□

एक बैठे-ठाले की प्रार्थना

[प्रोफेसर पं० बदरीनाथ भट्ट]

लीडरी मुझे दिला दो राम,
चले जिससे मेरा भी काम ।
कुछ ही दिन चलकर दलदल में फँस जाती है नाव,
भूख लगे पर दूना जोर पकड़ते मन के भाव—
कि मैं भी कर डालूँ कुछ काम,
लीडरी मुझे दिला दो राम ॥1॥
हिन्दू-मुस्लिम-प्रेम-भाव का कहें गर्म बाजार,
देश-भक्ति का मेरे ही सिर रख दो दारमदार—
लगा दूँ लेक्चरों का लाम,
लीडरी मुझे दिला दो राम ॥2॥

धर्म कर्म की धूम मचाकर कलि को कर दूँ चूर,
पृथ्वी पर ही स्वर्ग दिखा दूँ, करूँ दलिद्दर दूर—
दाम के दाम, नाम का नाम !
लीडरी मुझे दिलो दो राम ॥3॥

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मार्च, 1924]

□□

चौपट का नगाड़ा

[हिज़ होलीनेस स्वामी चौपटानन्द शास्त्री]

बजा नगाड़ा चौपट का, चारों ओर मचा अन्धेर।
माल मारते हैं मूजी सब, मिले नहीं सज्जन को बेर ॥1॥

बदमाशों की बन आयी है, सब मिल पूजें उनके पैर।
सीधे-सादे बेचारों की, कहीं नहीं दिखलाती खैर ॥2॥

जाति-देश के नेता-पद तक, पा जाते हैं लण्ठ लबार।
क्यों न रकम वे हजम करें ? क्यो चन्दा जावें नही डकार ? ॥3॥

देश-प्रेम का दम भर-भर कर, भरमाया लोगों को खूब।
अपना काम बनाया सब विधि, दुनिया को लूटा है खूब ॥4॥

ऐसे ही चौपटचन्दों ने, असहयोग की थाम लगाम।
लुटिया खूब डुबायी इसकी, हुए आप पूरे बदनाम ॥5॥

चन्दा खाया, फण्ड सफाया किया, हुए बस मालामाल।
छोड़ देश-सेवा का धन्धा, अब हैं पूरे बने दलाल ॥6॥

कभी धर्म-सेवा का रंग था, उसमें पाये पाँच हजार।
काँगरेस के मन्त्री बनकर, रुपये खाये बीस हजार ॥7॥

खुली पोल, सब लगे पीटने, उनकी बदनामी का ढोल।
जूते पड़े हजारों सिर पर, नहीं निकलता मुँह से बोल ॥8॥

होली

[पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय]

खेलो रंग अबीर उड़ावो लाल गुलाल लगावो।
पर अति सुरँग लाल चादर को मत बदरंग बनाओ
न अपना रंग गँवाओ
जनम-भूमि की रज को लेकर सिर पर ललक चढ़ाओ।
पर अपने ऊँचे भावों को मिट्टी में न मिलाओ।
न अपनी धूल उड़ाओ।
प्यार उमंग रंग में भीगो सुन्दर फाग मचाओ।
मिलजुल जी की गाँठें खोलो हित की गाँठ बँधाओ।
प्रीति की बेलि उगाओ।

[वर्ष 1, संख्या 30—15 मा

एक बैठे-ठाले की प्रार्थना

[प्रोफेसर पं० बदरीनाथ भट्ट]

लीडरी मुझे दिला दो राम,
चलै जिससे मेरा भी काम।
कुछ ही दिन चलकर दलदल में फँस जाती है नाव,
भूख लगे पर दूना जोर पकड़ते मन के भाव—
कि मैं भी कर डालूँ कुछ काम,
लीडरी मुझे दिला दो राम ॥1॥
हिन्दू-मुस्लिम-प्रेम-भाव का करूँ गर्म बाजार,
देश-भक्ति का मेरे ही सिर रख दो दारमदार—
लगा दूँ सेवकरों का साम,
लीडरी मुझे दिला दो राम ॥2॥

सरिता जल जलनिधि महँ जावै।
जिमि पबलिक-धन नेता खावै।

दोहा हरित भूमि तृण-संकुलित, समुझि परै नहिं पन्थ।
जिमि मिलाय नेता दिये, श्रुति-कुरान-गुरु-ग्रन्थ।

चौपाई दादुर-धुनि चहुँ ओर सुहाई।
जिमि लीडर भापन मनभाई।
नव पल्लवमय विटप अनेका।
वर्त्तमान-युग लीडर-भेका।[1]
अर्क जवास पात बिन भयऊ।
जस स्वराज्य के उद्यम गयऊ।
खोजत कतहुँ मिली नहिं धूरी।
जिमि स्वराज्य की आशा दूरी।
सस-सम्पन्न सोह महि कैसी।
लीडर-गण की बातें जैसी।
निशि-तम-घन खद्योत विराजा।
नकली नेतन-केर समाजा।
महावृष्टि चलि फूटि कियारी।
जिमि कौंसिल ने बात बिगारी।
कृषी निरावहिं चतुर किसाना।
सत्य तजहिं जिमि सुबुध सयाना।
देखिय चक्रवाक खग नाहीं।
जिमि गान्धी जी कौंसिल माँही।
ऊसर बरसै तृण नहिं जामा।
कौंसिल गरजे सरै न कामा।
विविध-जन्तु-संकुल महि भ्राजा।
भारत जिमि अंगरेजी राजा।
जहँ-तहँ पथिक रहे थकि नाना।
जिमि नेतागण मुँह पियराना।

---

1. अर्थात् वर्त्तमान युग-रूपी वर्षाकाल में जैसे लीडर-रूपी भेक अर्थात् मेंढक बहुत पैदा हो गये हैं, वैसे ही इस बरसात में नये-नये पल्लव और शाखाएँ वृक्षों में निकल आयी हैं। इति संजीवनी-भाष्यः।

बड़े सोच में पड़े, करूँ क्या, कैसे बच जायेगी लाज।
कैसे मुँह दिखलाऊँ जग में, गिरी गगन से कैसी गाज ॥9॥

बड़े भाग्य से अवसर आया, हुआ गिरफ्तारी का ज़ोर।
वह भी पकड़े गये मचाकर, गाँधीजी की जय का शोर ॥10॥

वह भी ख़ासा मेला ही था, पूरी थी भेड़िया धसान।
सच्चा-झूठा कौन देखता? सत्तू मे मिल गया पिसान ॥11॥

(अंश)

[वर्ष 1, संख्या 41—7 जून, 1924]

□□

वर्षा-वर्णन

बीसवीं सदी की रामायण के लीडर-कांड से उद्धृत

[बाबा बबूलदास]

चौपाई

घन घमण्ड नभ गरजत घोरा।
टका-हीन कलपत मन मोरा।
दामिनी दमकि रही घनमाहीं।
जिमी लीडर की मति थिर नाहीं।
वर्षहिं जलद भूमि नियराये।
लीडर जिमि चन्दा-धन पाये।
बूँद-अघात सहहिं गिरि कैसे।
लीडर-वचन प्रजा सह जैसे।
क्षुद्र नदी भरि चलि उतराई।
जस कपटी-नेता-मति भाई।
भूमि परत भा डाबर पानी।
जिमि नेतहिं माया लपटानी।
सिमिटि-सिमिटि जल भरहिं तलावा।
जिमि चन्दा नेता पँह आवा।

सरिता जल जलनिधि महँ जावै।
जिमि पबलिक-धन नेता खावै।

दोहा हरित भूमि तृण-संकुलित, समुझि परै नहिं पन्थ।
जिमि मिलाय नेता दिये, श्रुति-कुरान-गुरु-ग्रन्थ।

चौपाई दादुर-धुनि चहुँ ओर सुहाई।
जिमि लीडर भाषन मनभाई।
नव पल्लवमय विटप अनेका।
वर्त्तमान-युग लीडर-भेका।[1]
अर्क जवास पात बिन भयऊ।
जस स्वराज्य के उद्यम गयऊ।
खोजत कतहुँ मिली नहिं धूरी।
जिमि स्वराज्य की आशा दूरी।
सस-सम्पन्न सोह महि कैसी।
लीडर-गण की बातें जैसी।
निशि-तम-घन खद्योत विराजा।
नकली नेतन-केर समाजा।
महावृष्टि चलि फूटि कियारी।
जिमि कौंसिल ने बात बिगारी।
कृषी निरावहिं चतुर किसाना।
सत्य तजहिं जिमि सुबुध सयाना।
देखिय चक्रवाक खग नाहीं।
जिमि गान्धी जी कौंसिल माँही।
ऊसर बरसै तृण नहिं जामा।
कौंसिल गरजे सरै न कामा।
विविध-जन्तु-संकुल महि भ्राजा।
भारत जिमि अंगरेजी राजा।
जहँ-तहँ पथिक रहे थकि नाना।
जिमि नेतागण मुँह पियराना।

---

1. अर्थात् वर्त्तमान युग-रूपी वर्षाकाल में जैसे लीडर-रूपी भेक अर्थात् मेंढक बहुत पैदा हो गये हैं, वैसे ही इस बरसात में नये-नये पल्लव और शाखाएँ वृक्षों में निकल आयी हैं। इति संजीवनी-भाष्यः।

दोहा कबहूँ प्रबल चल मारुत, जहँ-तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि गाँधी की फूँक ते, मिथ्या-भ्रम नसि जाहिं।[1]

[वर्ष 2, संख्या 3—30 अगस्त, 1924]

नोट : 'मतवाला' में शिवपूजन सहाय एक ऐसे सदस्य थे जो पं० ईश्वरी प्रसाद शर्मा के शिष्य थे। अन्य कोई किसी के शिष्य रूप में ख्यात न था। अनुमान किया जा सकता है इसके कवि पं० शर्मा ही होंगे। वे ऐसी कविताएँ लिखते भी थे।

□□

खुशामदी टट्टू

[वशिष्ठनारायण 'निर्बल')

दुम टाइटिल की लगी है बड़ी देखो पीछे;
हुँआँ हुँआँ सबके ही हाँ में हाँ मिलाते हैं।
दूसरे मरें कि जियें कुछ न पड़ी है इन्हें;
अपनी भलाई में ही खुशी ये मनाते है॥
अड़ते न मौके पर धीमे से हैं भाग जाते;
हाकिम घुड़कते तो पूँछ ये हिलाते हैं।
इन्हें कहें गीदड़ या हम 'हाँ हजूर' कहें;
दीखता न भेद कुछ एक सम पाते हैं॥

[वर्ष 2, संख्या 9—18 अक्टूबर, 1924]

□□

---

१. इस कविता में लीडर या नेता से उन स्वयं सिद्ध लीडरों और नेताओं का ही अर्थ लेना, जो केवल पब्लिक का धन नष्ट करते है। सबको बबूल के काँटे में एक ही तरह घसीटना बाबा बबूलदास का अभिप्राय नहीं है।

बाबा बबूलदास का शिष्य हेंगादास

आश्चर्य

[निर्मल]

जिसने विधर्मियों की धुरियाँ उड़ाईं और,
जिसने कुशासन को बार बार मसका।
जिसने बहाई शान्ति क्रान्ति की लहर लोल,
'निर्मल' सचाई से नही जो नेक खसका।
पार महासागर के जिसका अखण्ड बल,
गोरी गरबीली के हिये में जाय कसका।
ऐसे वीर गाँधी भी दरिद्र देशवासियों को,
पान न करा सके स्वराज-सुधा रस का।

[वर्ष 2, संख्या 14— 22 नवम्बर, 1924]

□□

खाएँगे

[कालिकाप्रसाद 'कमल']

पूरे है प्रवीण स्वाँग भरने में हिन्दू लोग,
सैकड़ों नुमाइशी ढकोसले बनाएँगे।
आड़ लेके धर्म की चलेंगे चाल जाल भरी,
संगठन का भी शोर जोर से मचाएँगे।
भाई भाई कहेंगे अछूतों को सभा के बीच,
गन्दगी न छूत की कलेजे से हटाएँगे।
खाएँगे स्वधर्मियो के हाथ का प्रसाद नही,
चाँद पर जूतियाँ विधर्मियों की खाएँगे।

[वर्ष 2, संख्या 15— 29 नवम्बर, 1924]

□□

दोहा कबहुँ प्रबल चल मारुत, जहँ-तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि गांधी की फूंक ते, मिथ्या-भ्रम नसि जाहिं।[1]

[वर्ष 2, संख्या 3—30 अगस्त, 1924]

नोट : 'मतवाला' में शिवपूजन सहाय एक ऐसे सदस्य थे जो पं० ईश्वरी प्रसाद शर्मा के शिष्य थे। अन्य कोई किसी के शिष्य रूप में ख्यात न था। अनुमान किया जा सकता है इसके कवि पं० शर्मा ही होंगे। वे ऐसी कविताएँ लिखते भी थे।

□□

खुशामदी टट्टू

[वशिष्ठनारायण 'निर्बल')

दुम टाइटिल की लगी है बड़ी देखो पीछे;
हुँआँ हुँआँ सबके ही हाँ में हाँ मिलाते हैं।
दूसरे मरें कि जियें कुछ न पड़ी है इन्हे;
अपनी भलाई मे ही खुशी ये मनाते हैं॥
अड़ते न मौके पर धीमे से हैं भाग जाते;
हाकिम घुड़कते तो पूँछ ये हिलाते हैं।
इन्हें कहें गीदड या हम 'हाँ हजूर' कहें;
दीखता न भेद कुछ एक सम पाते हैं॥

[वर्ष 2, संख्या 9—18 अक्टूबर, 1924]

□□

---

१. इस कविता मे लीडर या नेता से उन स्वयं सिद्ध लीडरों और नेताओं का ही अर्थ लेना, जो केवल पब्लिक का धन नष्ट करते है। सबको बबूल के काँटे में एक ही तरह घसीटना बाबा बबूलदास का अभिप्राय नहीं है।

बाबा बबूलदास का शिष्य हँगादास

आश्चर्य

[निर्मल]

जिसने विधर्मियों की धुर्रियाँ उड़ाई और,
जिसने कुशासन को बार बार मसका।
जिसने बहाई शान्ति क्रान्ति की लहर लोल,
'निर्मल' सचाई से नहीं जो नेक खसका।
पार महासागर के जिसका अखण्ड बल,
गोरी गरबीली के हिये में जाय कसका।
ऐसे वीर गाँधी भी दरिद्र देशवासियों को,
पान न करा सके स्वराज-सुधा रस का।

[वर्ष 2, संख्या 14— 22 नवम्बर, 1924]

□□

खाएँगे

[कालिकाप्रसाद 'कमल']

पूरे हैं प्रवीण स्वाँग भरने में हिन्दू लोग,
सैकड़ों नुमाइशी ढकोसले बनाएँगे।
आड़ लेके धर्म की चलेंगे चाल जाल भरी,
संगठन का भी शोर जोर से मचाएँगे।
भाई भाई कहेंगे अछूतों को सभा के बीच,
गन्दगी न छूत की कलेजे से हटाएँगे।
खाएँगे स्वधर्मियों के हाथ का प्रसाद नहीं,
'चाँद पर जूतियाँ विधर्मियों की खाएँगे।

[वर्ष 2, संख्या 15— 29 नवम्बर, 1924]

□□

लीडरावतार

[वर्तमान पुराणात्' बाबा बबूलदासेन संगृहीतः,
तस्य शिष्येण हेंगादासेन प्रेषितश्च]

पार्वती उवाच

मूल : कैलासशिखरे रम्ये गौरी पृच्छति शंकरम् ।
लीडराणांतु माहात्म्यं श्रोतुमिच्छाम्यहं प्रभो ।

भाषाटीका : रमणीय कैलास-पर्वत के शिखर पर बैठी हुई गौरी-जो है सो जाय करकै, शिवजी से पूछती भई कि हे महाराज ! मैं लीडरों का माहात्म्य सुनना चाहती हूँ, सो जाय करकै आप मुझे सुनाइये ॥1॥

शंकरोवाच

मूल : शृणु देवि प्रवक्ष्यामि लीलां रम्यां सुखप्रदाम् ।
लीडराणां महापुण्यां ज्ञान-वैराग्यदायिनीम् ॥

भाषाटीका : शिवजी कहते भये कि हे देवि जो है सो जाय करकै सुनो, मैं तुम्हें बड़ी ही सुन्दर और सुख देने वाली, पुण्य से भरी हुई, ज्ञान और वैराग्य को उत्पन्न करनेवाली लीडरों की लीला सुनाता हूँ ॥2॥

मूल : कलियुगे भारतेदेशे श्वेतद्वीपसमागताः ।
कोट-बूट-धराः लोकाः राज्यं कुर्वन्ति वै सुखम् ॥

भाषाटीका : कलियुग में भारतवर्ष में, जो है सो जाय करकै, सफ़ेद टापू से आये हुए कोट-बूट धारण करनेवाले लोग, जो हैं सो जाय करकै, बड़े सुख से राज्य करेंगे ॥3॥

मूल : भारतीयाः नराः सर्वे तेषां चरण-पूजकाः ।
चाटुकाराः भविष्यन्ति श्वेतांगभयपीडिताः ॥

भाषाटीका : हे देवि ! जो है सो जाय करकै, भारत के सब लोग इनके पैर पूजेंगे और इनके खुशामदी टट्टू हो जायँगे और सदा गोरे चमड़े के डर से डरते रहेंगे ॥4॥

मूल : अवलोक्य दुर्दशा ह्येषा भगवान्कमलापतिः ।
गांधीनाम महात्मानं प्रेषयिष्यति भूतले ॥

भाषाटीका : इनकी ऐसी जो है सो दुर्दशा देखकर भगवान् लक्ष्मीनाथ गांधी नाम के महात्मा को पृथ्वी पर भेजेंगे ॥5॥

मूल : निर्भयो सदयो गान्धी अहिंसाव्रतमुद्वहन् ।
भारतोद्धारणं कर्त्तुं तत्परो भविता लघुः ॥

भाषाटीका : वह निर्भय और सदय गांधी, जो है सो जाय करकै, अहिंसा-व्रत को धारण कर भारत का उद्धार करने के लिये शीघ्र ही तत्पर हो जायेगा ॥6॥

मूल : तस्मिन् काले महादेशे भारते वायुमण्डलम् ।
क्षुब्धं मेघसमाच्छन्नं भविष्यति न संशयः ॥

भाषाटीका : उस समय, जो है सो जाय करकै, इस बड़े भारी भारतदेश का वायु-मण्डल क्षुब्ध हो उठेगा और बादलों से ढँक जायेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥7॥

मूल : शासकाः मुह्यमानास्तु यास्यन्ति निभृतालयम् ।
पश्यन्त्वेदृशीं देशे लोकानां शुभजागृतिम् ॥

भाषाटीका : देश में लोगों की ऐसी शुभ जागृति देखकर, जो है सो जाय करकै, शासक लोग मोह में पड़कर सूने घरों में जा छिपेंगे ॥8॥

मूल : अस्मिन् काले भविष्यन्ति गेहे गेहे चतुष्पथे ।
लीडराख्याः नराः सर्वे शुक्ल-खद्दर-धारिणः ॥

भाषाटीका : इसी समय जो है सो जाय करकै, घर-घर और गली-गली, हर चौराहे पर सफेद खद्दर पहने हुए सब लोग, लीडर बने हुए नज़र आने लगेंगे ॥9॥

मूल : स्वार्थत्यागं महापुण्यं धारयन् व्रतमुत्तमम् ।
अहिंसां धारयिष्यन्ति सर्वभूतहितेरताः ॥

भाषाटीका : महापुण्यमय स्वार्थत्याग-रूपी उत्तमव्रत धारण करकै, जो है सो, ये सब प्राणिमात्र के हित में लगे हुए, अहिंसा का व्रत ग्रहण करेंगे ॥10॥

पार्वती उवाच

मूल : क्षिप्रं वद देवेश देशदुर्भाग्य दुःखिताः ।
लीडराः किं करिष्यन्ति ईदृशं व्रतमुद्वहन् ॥

भाषाटीका : पार्वती ने कहा—हे देवताओं के देवता ! आप जो है सो जाय करकै, शीघ्र ही मुझे बतलाइये कि ये देश के दुर्भाग्य से दुःखित

लीडर लोग ऐसा व्रत ग्रहण कर क्या करेंगे ? ॥11॥

शंकरो उवाच

मूल : शक्नोमि वक्तुं नहि लीडराणां यथार्थं रूपं शृणु देवि सत्यम् ।
अशेषलीलाचरितानि तेषां सहस्र-जिह्वो ऽकथनेऽसमर्थः ॥

भाषाटीका : शिवजी ने कहा—हे देवि ! जो है सो जाय करके, इन लीडरों का यथार्थ रूप मैं वर्णन नहीं कर सकता । इनकी लीलाएँ और चरित अशेष अर्थात् जो है सो अनन्त हैं । इनका वर्णन करने में सहस्र जिह्वाएँ रखने वाले शेष भी समर्थ नहीं हैं ॥12॥

मूल : प्रगृह्य चन्दाधनमप्यकातराः स्वदेशकल्याण निमित्तमात्रकम् ।
क्रमेण सर्वं निजलालसाग्नौ दास्यन्ति होता इव लीडरास्ते ॥

भाषाटीका : चन्दे का धन अकातरभाव से स्वदेश के कल्याण के ही निमित्त ग्रहणकर, ये धीरे-धीरे, जो है सो जाय करके, सफाचट कर जायेंगे और अपनी लालसा रूपी अग्नि में होता की तरह सारा धन डाल देंगे ॥14॥

मूल : यदाकदा जेल-समागतास्ते भूयोऽपि सर्वानपि वंचयन्ति,
स्वदेशभक्तिर्खलु बाह्यदर्शनं निजार्थसिद्धिस्तु यथार्थं लक्ष्यम् ।

भाषाटीका : यदि कहीं जेलखाने से लौट आये, तो फिर भी, जो है सो जाय करके, लोगों को ठगेंगे । इनकी स्वदेश-भक्ति ऊपर से दिखाने-भर की और यथार्थ लक्ष्य स्वार्थसिद्धि ही होगी ॥15॥

मूल : सहस्रशः भान्ति इमेव लीडराः धूर्ता. नटाः नित्यविवर्तशीलाः ।
प्रवंचयन् सर्वजनान् समुत्सुकान् विहाय लज्जा जयमाप्नुवन्ति ॥

भाषाटीका : इस तरह के हजारों लीडर जो हैं सो, शोभायमान होंगे । ये धूर्त और नटों की भाँति नित्य नये रंग बदलने वाले होंगे । ये देश की उन्नति के लिये उत्सुक सर्वसाधारण जनता को खूब ठगेंगे और बेहयाई का पल्ला पकड़कर जय को प्राप्त होंगे अर्थात् लोगों से जय-जयकार कहलवायेंगे ॥16 ।

पार्वती उवाच

मूल : कथं इमे लीडर-नाम-धारिणः कुर्वन्ति देशस्य हितार्थसाधनम् ।
वद प्रभो श्रोतमहं समीहे विदक्तृसम्भूतविचारमालाम् ॥

भाषाटीका : पार्वती ने कहा,—हे प्रभो ! ये लीडर नाम रखाने वाले लोग किस प्रकार देश का हित साधन करेंगे ? मैं जो है सो, आपके मुँह से निकले हुए विचारों को सुनने की बड़ी इच्छा रखती हूँ ॥17॥

शंकर उवाच

मूल : पुरा शुंभनिशुंभानां सेनानी रक्तबीजकः
रावणस्य सभामध्ये ये च राक्षस-पुंगवाः ॥
ते एव सद्यः सम्भूताः धूर्तलीडरसंज्ञकाः ।
तैर्वंचितो महात्मा सः लुप्तशक्तिर्भविष्यति ॥

भाषाटीका : प्राचीनकाल में जो है सो शुंभ निशुंभ का सेनापति जो रक्तबीज था अथवा रावण के दरबार में जो बड़े-बड़े राक्षस थे, वे ही आजकल धूर्त लीडरों के रूप में घूम रहे हैं। इनसे ठगा जाकर वह महात्मा अपनी सारी शक्ति खो देगा ॥18-19 ।

मूल : ये त्यागिनः सत्यसन्धाः तेऽपि यान्ति पराभवम् ।
नष्टे प्रभावे लोकानां शासकाः उग्रमूर्तयः ॥
पुनः पुनः प्रजापुंजं पीडयिष्यन्त्यकातराः ।
- लोकानां ताडनं सम्यक् प्रेक्षयिष्यन्ति लीडराः ॥

भाषाटीका : [इन्हीं धूर्तों के करते] जो त्यागी और सत्यसन्ध होंगे, वे भी पराभव को प्राप्त होंगे और लोकसत्ता का प्रभाव नष्ट हो जाने पर शासक उग्रमूर्ति धारणकर बारम्बार प्रजापुंज को पीड़ित करेंगे तथा लीडरगण, जो हैं सो, टुकुर-टुकुर लोगों को दमन की चक्की में पिसते हुए देखा करेंगे ॥20-21॥

मूल : दास्यामि हृदये स्थानं भारतोद्धारकल्पना ।
न तावद्देवि कल्याणि यावद्धूर्तलीडराः ॥
लोकान् वंचयिष्यन्ति भाषयन् प्रियभाषणम् ।
धारयन् शुक्लवेशंतु हृदि हालाहलं विषम् ॥

भाषाटीका : हे देवि ! हे कल्याणि ! जब तक जो है सो, इस प्रकार के धूर्त लीडर, लोगों को मीठी-मीठी बातें सुनाकर—अर्थात् जो है सो लच्छेदार व्याख्यान दे-देकर, हृदय में हलाहल-विष रखते हुए भी, सफ़ेद पोश बनकर ठगते फिरेंगे, तब तक मैं भारत के उद्धार की कल्पना को हृदय में स्थान नहीं दूँगा ।
॥22-23॥

[इति श्रीवर्तमान पुराणे लीडरावतारवर्णने पार्वती-शंकर संवादो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥]

[वर्ष 2, संख्या 17—13 दिसम्बर, 1924]

□□

कच्चा चिट्ठा

[लेखक-मुनीमजी]

(1) आज तक मौज से बहार लूटि वाह-वाह,
सबसे कराई पिटवाईं घोर तालियाँ।
झाड़-झाड़ वक्तृता सुनाई देशभक्ति-राग,
गोरी सरकार को सुनाईं खूब गालियाँ॥
रेख नहीं भीनी, अभी उम्र है नवीनी,
तऊ लीनी सब देश से बधाई अरु डालियाँ॥
खाँस-खाँस कंठ खोल आफत ख़िलाफत की,
सबको सुनाई और चलाई चक्रवालियाँ॥

(2) कोट डाट खद्दर को, टोप गाँधी बाबा को सो,
धोतिहू सु-मोटी या लँगोटी बाँधि लीनी है।
सूधो सो सुबेस यह देखि देस मोहि रह्यो,
मीठी-मीठी बातन में देस-भक्ति भीनी है।
साँचे स्वार्थ त्यागी देस-सेवक को पूछै कौन?
लंठ और लबारन की लीला परबीनी है।
याही हेत देस सब आँखि मूँदि मूँदि निज,
बार-बार थैलियाँ इन्हीं की भरि दीनी है।

(3) जन्म धारि हिन्दू-कुल आइ जवनों से मिले,
आफत ख़िलाफत की आपनी बनाई है।
नाम लिखवायो जाति-पाँति-तोड़कों में जाइ,
खाइ सब संग चुटिया भी कटवाई है।
मौलवी के संग इकरंग भए पंडित जू,
दग दुनिया है, धूम चारो ओर छाई है।
एकता के धोखे एकाकार करि याही भाँति,
हिन्दू-जनता को खूब जूतियाँ खिलाई है।

(4) खाइ-खाइ चन्दा-धन मोटे अलमस्त फिरें,
घूमते हैं लाखन में धाक-सी जमाई है।
धारि कै अहिंसा छिपे हिंसा को प्रचार करें,
मेल को हिमायती ह्वै रार मचवाई है।
गुण्डे करें लूटपाट हिन्दू सब खावें लात,
कहाँ है स्वराज? जान आफत में आई है।

पूछैं जाइ नेतन सों हिन्दू और मुसलमान,
मेल की दीवार वह कौन ढहवाई है ?

(5) कोऊ लेवैं मोटर बनावैं घर-द्वार कोऊ,
खावैं धन चंदा को निकाला नया धंदा है।
नेक ना लजावैं औ बनावैं बात भाँति-भाँति,
ऐसो बनि जावैं ज्यों खुदा का प्यारा बंदा है।
राम ही बचावैं ऐसे ढोंगी देसभक्तन सों,
अजब अनोखा विकराल जाल-फंदा है।
ऊपर सों राम राम, भीतर सों सिद्ध काम,
बाहर सों साफ़-साफ़, भीतर सो गंदा है।
[20-12-24]

लीडरी

रंग गिरगिट-सा बदलता हूँ सभाओं में जनाब।
आर्य होकर भी उड़ाता होटलों में जा कबाब।।
मूँछ ऐंठा घूमता हूँ चाभता हूँ माल तर।
मिस शरीफा हैं पिलाती नाज से मुझको शराब।।
मारकर चंदा मजे में पेलता हूँ डण्ड रोज।
'स्टुपिड पब्लिक' न मुझसे ख्वाब में लेती हिसाब।।
''फर्स्ट' श्रेणी का मुझे है रेल में डब्बा 'रिजर्व'।
आज कलकत्ता तो कल हूँ लखनऊ का मैं नवाब।।
लाद सिर से पैर तक खद्दर महा मोटा सफेद।
मौज से चलता, मटकता, दाबकर इंगलिश किताब।
देखकर भौंहे तनी 'सर्जेण्ट' की बदूक सी।
बीवियों सा डाल लेता हूँ दबक मुख पर नकाब।।
मार पालथी ध्यान बक-सा हूँ लगाता सुबह-शाम।
ढोंग रचकर साधुता का देखता रंगीन ख्वाब।।
लीडरी है इस सदी का सबसे आला रोज़गार।
इससे बेहतर हो नहीं सकता कोई कारे-सवाब।।

—तूफानप्रसाद ग्रेजुएट
[6-6-25]

लीडर

लिलीडरः किं न करोति पापम् ।
देश हितार्थंय लीडर शिपार्थाय ॥

दिखाई दे रहे है मुल्क में, चारों तरफ लीडर ।
यहाँ लीडर, वहाँ लीडर, जहाँ देखो वही लीडर ॥
किसी की है बढ़ी दाढी, किसी की मूँछ ग़ायब है ॥
घुटा करके कई सिर-मूँछ-दाढ़ी हैं बने लीडर ।

जमाते रोव हैं अपना, डपटकर बोलते इंगलिश ।
ज़बाने हिन्द से लेकिन, है कोसों दूर पर लीडर ॥
बदन के फेंक कर कपड़े, बगल में दाबकर झोला ।
खुले सिर घूमते फिरते, अनोखे रूप में लीडर ॥

कई तबलीग के हामी, कई है संगठन करता ।
कई तंज़ीम शुद्धि मे, बने फिरते बड़े लीडर ॥
कही गाँधी की आँधी में, जो हज़रत जेल जा पहुँचे ।
तो घर आते ही आते छूटकर, वे बन गये लीडर ॥
बघारेंगे बडी शेखी, य' जनता मे शुजाअत की ।
मगर मौक़ा पडे पर दुम दबाकर भागते लीडर ॥
कई 'एमेलसीयो' ने, लिया है देश का ठेका ।
नचाते हैं इशारे पर, समूचे देश को लीडर ॥

भरे हैं 'कांगरेस' में ये, न चलने दें किसी की भी ।
ग़रीबों की कमाई पर, उड़ाते माल हैं लीडर ॥
बहस करते रहे दिन रात, कर दें खोपड़ी खाली ।
न करते है, न करने दें, किसी को काम ये लीडर ॥
पडी है हिन्द की किश्ती, भँवर में डगमगाती है ।
किनारे पर लगे कैसे, ठसाठस भर गये लीडर ॥

—एण्टी लीडर (23-10-26)

लो सुन लो

[कवित्त-घनाक्षरी]

(1) रंडियों पै खोल के खजाने खूब खर्च करो,
पंडितों को दान दे कलंक अंक लेओ ना ।

आप तर माल को उड़ाओ सुख पाओ फूल,
भूल के चबेना भी स्वबंधुओं को देओ ना।
धारे बेटा बेटियों के ब्याह मे बड़ाई हित,
रकम लुटाओ पर जाति नाव खेओ ना।
जाने दो रसातल को खूब सुख नींद सोओ,
नाम संगठन के छदाम एक देओ ना।

(2) अधम महान् छूत पापी है अछूत बड़े,
इनको समाज बीच स्वप्न में मिलाओ ना।
लुटने दो लाल ललनायें सरे आम यों ही,
जग को विरोध को अवाज से हिलाओ ना।
मुक्ति-मार्ग से जो पथभ्रष्ट हो गये हों उन्हें,
सच्ची सुधा शांति की स्वधर्म की पिलाओ ना।
पिटने दो पद-पद पर परधर्मियों से,
जीवन दे किन्तु कभी जाति को जिलाओ ना।

(3) फैली हैं कुरीतियाँ समाज में अनेक आज,
किन्तु कभी साहस से उनको भगाओ ना।
मुर्दा जो रहे हैं दिल देशवासियों के किन्तु,
जीवन की ज्योति से उन्हें तुम जगाओ ना।
हो के हतबुद्धि पथभ्रष्ट हो रहे हैं कुछ,
जाने भी दो उनको सुकर्म में लगाओ ना।
पायेंगे किये का फल आप ही विरोधी सब,
भाई-भाई पर आप प्रेम में पगाओ ना।

दोहा— पड़े-पड़े यों ही पिटो, होकर क्रूर निकाम।
किन्तु संगठन का कभी, भूल न लेना नाम॥

—कण्टक (इटावा) [7-7-26]

□□

मनोरमा की सौगात

प्यारी सखी 'मनोरमा' ने अबकी होली के अवसर पर 'मतवाला' के लिये बहुत बढ़िया सौगात भेजी है। यह सुंदर सौगात संग्रह करने में सखी के उत्त-मांग को जो अनिर्वचनीय कष्ट पहुँचा होगा, उसके प्रति 'मतवाला' अपनी

आंतरिक सहानुभूति प्रगट करता है और प्रेषित सौगात की दीर्घता देखकर सखी की अवस्था का अनुमान करता हुआ, उसके अभिभावकों से अनुरोध करता है, कि 'अब विलम्ब केहि काज !' कोई सुपात्र न प्राप्त हो तो हज़रत जहूर के ही गले मढ़कर बला टालिये।

(1) सौगात का प्रतिचित्र (2) मंजूषा का अग्रभाग (3) मंजूषा का पश्चाद् भाग।

'मतवाले'

मेरे छींटों से शायद तुझे छींक आ गयी। खैर, अब दो-चार बाल सेवा में उपस्थित हैं। इन्हीं को लेकर संतोष कर। तू इसी के लायक है।

—'मनोरमा'

From	The Editor
The Editor	'Matwala'
'Manorama'	Bal Krishna Press
Belvedera Press	36, Shanker Ghosh Lane
Allahabad	Calcutta

□□

सौगात पर अभिमत

[ले० कविकुल-कुमुद-कलाधर कविवर श्री घोंघाकर]

लज्जा की सुलंक तोड़ मूँह फोड़ भद्रता का,
सभ्यता को हुकुम सुना दिया कड़ा-कड़ा।
प्रेमी 'मतवाला' को पठाय चोंथ 'झोआ भर',
शीलता व श्लीलता को खा गई खड़ा-खड़ा।
'घो घाकर' देखि के प्रताप वी 'मनोरमा' का,
भय से है कांपता पतिव्रत पड़ा-पड़ा।
अभी तो है छोटी जब उमर हो जायगी तो,
गजब करेगी यह छोकरी बड़ा-बड़ा।

[6-3-26]

'मनोरमा' संपादक श्री ज्योतिप्रसाद' निर्मल घोर निराला-विरोधी थे। 'मतवाला' के साथ हास्य-परिहास और विरोध का आदान-प्रदान लगातार रहा। इस प्रकरण में ग्राम्यता का रंग ज्यादा ही गाढ़ा है। 'मतवाला' ने अपने परिहास में कभी शील का अतिक्रमण नहीं किया।

□□

कम्युनिस्ट

[अष्टावक्र]

जाग रे गरीब, जाग ! जाग !!
यह पूंजीपति पापी हैं
त्रिभुवन के संतापी हैं
विश्व सकल यह तेरा है
जिस पर इनका घेरा है

तू है हज़ार ये चार
तू सिंह और ये स्यार
मार ! इनके चंगुल से—
भाग रे ग़रीब; भाग ! भाग !!

तू जिस दिन करवट लेगा
इनको इक धक्का देगा
गुल ऐसा यहाँ खिलेगा
जिससे त्रिभुवन महकेगा

फिर, क्यों करता है देर
हो एक; ज़माना फेर
लगा दे विषम-विश्व में
आग रे गरीब; आग ! आग !!

[वर्ष 5, संख्या 1—13 अगस्त, 1927]

□□

फ़रियादे 'बिसमिल'

[बिसमिल]

हमें होता है जाहिर 'पानियर' के भी खयालों से।
वह आजिज आ गये हैं आजकल अखबार वालों से ॥

खराब दिन करे बरबाद रात कौन करे।
वह कह रहे हैं कि ऐसों से बात कौन करे ॥

परीशां रातदिन तू ऐ दिले नाशाद होता है।
कोई ऐसा भी महुयो नाल ओ फ़रियाद होता है ॥
किसी को कर नही सकता कोई बरबाद आलम में।
जिसे बरबाद तुम करते हो वह बरबाद होता है ॥
हज़ारों मर गये इस कोशिशे बेजा में ऐ 'बिसमिल'।
गुलामी से कही 'हिन्दोस्तां' आज़ाद होता है।
परवा जो 'डॉक्टर' को नही मेरे हाल की।
बेकार पी रहा हूँ दवा 'अस्पताल' की ॥

[वर्ष 5, संख्या 13—12 नवम्बर, 1927]

□□

जज़्बाते 'कैस'—1

[शिवमूरतलाल 'कैस' बनारसी]

जेल होगा उसको या कुर्सी मिले दरबार की।
जिसकी जानिब घूम जायेगी नज़र सरकार की ॥
गर कोई सच्ची खबर छापी कही सरकार की।
आ गई शामत एडीटर की भी और अख़बार की ॥
चलते हैं जूते यहाँ भी गालियों के साथ-साथ।
आजकल हालत न पूछो कोर्ट में कुछ 'बार' की ॥

गोलियों से कम नहीं है लीडरों की बात 'फ्रेम'।
हिन्द को हाजत नहीं बन्दूक की तलवार की ॥

[वर्ष 5, संख्या 17—10 दिसम्बर, 1927]

□□

शाही कमीशन

[आज़ाद]

बहार आई है पूरे पर कि आमद है कमीशन की।
सबा होशियार हो जाना तबाही है ये गुलशन की ॥
शफी भूले शफ़क्कत पर नजर पर गजनवी भूले।
मनायें खैर कह दो चुपके-चुपके अपने खिरमन की ॥
तमन्नाओं की खिचड़ी 'सर' की हांडी में पका लेवें।
जो फ्रीडम बेच कर उम्मीद करते हैं कमीशन की ॥
पड़े थे ख्वाबे ग़फ़लत मे जगाया आप जैसों ने।
हमें भी पड़ गई है फिक्र अब 'आज़ाद' गुलशन की ॥
अगर होगा क़वी बाज़ू तो ले लेवेंगे हक अपना।
जरूरत अब नहीं भारत को है शाही कमीशन की ॥

[वर्ष 5, संख्या 19—24 दिसम्बर 1927]

□□

जज़बाते 'कंस'—2

[शिवमूरतलाल 'कंस']

हज़ारों गालियाँ खाएँ न क्यों साहेब के दफ्तर में।
करें क्या ए बेचारे जब गुलामी है मुकद्दर में ॥
यही कुछ वाकयाते जिन्दगी जम है रजिस्टर मे।
छुटे कालिज से तो आकर फँसे साहेब के दफ्तर में ॥

फकत इतना ही तो है फर्क पबलिक और लीडर में।
फँसा है एक रोटी में और यक कौंसिल के चक्कर में॥
खुशामद एक करता है और यक हँस हँस के सुनता है।
जमीनों आसमाँ का फर्क है आका में नौकर में॥
खुदा भी दो नजर से देखता है अपने बन्दों को।
कोई रोता है गाड़ी को कोई बैठा है मोटर में॥
कोई मजमून लिखता है कोई रुपया कमाता है।
न पूछो फर्क क्या है आज कल राइटर एडीटर में॥
जनावे 'कंस' फन्ने शायरी आसाँ नहीं यक दम।
बहुत दुश्वार कहना शेर का है रंग 'अकबर' मे॥

[वर्ष 5, संख्या 19—24 दिसम्बर, 1927]

□□

तीन आँखों में साम्यवाद

[मुक्त]

लीडर— मुक्त हम सम्मति न प्रकट करेंगे अभी
समय स्वयं ही सब कुछ कहलायगा।
किन्तु, देने पर भी दुहाई हिन्दू-हित की न
वोट कौंसिलों के लिए हमें मिल पायगा॥
शान्ति की लहर से भरेगा सब ही का हृदै
देश का दिमाग एक बार चकरायगा।
सोचने में किन्तु यह तक भी सवेरा नहीं
झण्डा साम्यवाद का यहाँ पै फहरायगा॥

पूँजीपति— साम्यवाद का प्रचार हो रहा है यह
हिन्दवासियों के हृदै में ठौर पा न जाय।
ज्वालामुखी अपनी भयंकर लपट हाय
देश को हमारे कहीं हाय! झुलसा न जाय॥

वैभव हमारा दीखता है जो अतुल 'मुक्त'
उसके बढे हुए उदर में समा न जाय।
पा न जाय शासन की बागडोर हाय? कहीं
'बोल-शिव-जयं' का नाद भारत में आ न जाय॥

दलित— यातना से भूख की मरे जो जा रहे हैं नित्य
उनको जिलाया, अन्न सूखा भी खिलाया करे।
अंधे औ अपंग हों जो पीडित अनेक भांति
'मुक्त' उनकी तो दिव्य-कंचन-सी काया करे॥
अपनी बना के स्कीम नाश देश का जो करें
उन लीडरों को सीधा पथ दिखलाया करे।
देव दलितों का दुख दूर करने के लिए
ऐसा दिन भारत में रोज-रोज आया करे॥

[वर्ष, 5 संख्या 21—7 जनवरी, 1928]

□□

जज़्बाते 'कैस'—3

[शिवमूरतलाल 'कैस']

बढ के हैं सरकार मे नौकर मेरे सरकार का।
कुछ कलक्टर से नहीं कम रौब थानेदार का॥
जो न हो जाए यहाँ, यह राज है सरकार का।
काम बी० ए० कर रहे हैं आजकल बेगार का॥
हो के आजिज़ कर दिया दरवाजा मुखतारी का बंद।
हस्र होता क्या बतावो आखिर इस भरमार का॥
नाम ऐ जानां समझ लोग पढते हैं इसे।
आजकल तो है ज़माना पानियर अख़बार का॥
माडरेट के नाम से मशहूर हैं पवलिक मे वो।
चैन से रहते है जो गुन गाते हैं सरकार का॥

दस्ते शफकत वो बढा कर फीस करते हैं तलब।
डाक्टर साहेब से कहिये हाल जो बीमार का ॥
इन मिसों के 'कैंस' जो तेगे नज़र के हैं शिकार।
भूल जायेंगे वो एक दिन नाम भी तलवार का ॥

(वर्ष 5, संख्या 23, 21 जनवरी, 1928)

□□

जज़्बाते 'कैंस'—4

[शिवमूरतलाल 'कैंस']

'लव' का मआमला कहाँ मगरिब में 'चीप' है।
वासो का 'मार्केट' तो वहाँ 'वेरी चीप' है ॥
लीडरों का आजकल तैयार है कितना गला।
तोप की आवाज से कुछ कम नहीं इनकी सदा ॥
जो म्युनिसपिल्टी के कुछ दिन हेल्थ अफसर हो गए।
घर के कोने-कोने में आबाद मच्छड़ हो गए।,
मुफ्त का तो माल है जो चाहिये सो कीजिये।
भेजकर 'रायल कमीशन' को कमीशन दीजिये ॥
हिन्द वालों की कहाँ हिम्मत जो मुँह से चूँ करें।
आप खुद मुख्तार है जो दिल में आये कीजिये।
पहनने को 'सूट' और रहने को 'होटल' चाहिये।
और 'हनटिंग' के लिये चिड़ियों का जंगल चाहिये ॥
आरज़ू है एक 'अप टू डेट जेंटिल मैन' की।
रोज 'डीनर' में हमें 'ह्विसकी' बोतल होना चाहिये ॥
क्या वताऊँ दोस्ती में साहेबों के क्या हुआ।
उनका 'डीनर' हो गया और अपना दीवाला हुआ ॥
पालिसी से उनके बचना 'कैंस' कुछ आसाँ नहीं।
सख्त मुशकिल से है बचता साँप का काटा हुआ ॥

[वर्ष 5, संख्या 24 — 28 जनवरी, 1928]

□□

कर्मेन्दु शिशिर

जन्म : 26 अगस्त, 1953 ईसवी

चार वर्षों तक बिहार की उग्र वामपंथी राजनीति में सक्रिय भागीदारी। एक वर्ष भोजपुर (बिहार) के गाँवों में 'होल टाइमर' भी रहे। मतभेदों के बाद साहित्यिक-कर्म में संलग्न।

कृतियाँ : उपन्यास—कोचान की धार
कहानी संकलन—कितने दिन अपने
साहित्येतिहास—मतवाला-मंडल

संपादन—
- भोजपुरी होरी गीत (दो भागों में)
- मतवाले की बहक
- 'साक्षात्कार' के मतवाला अंक में विशेष योगदान
- राधाचरण गोस्वामी की चुनी रचनाएँ
- मतवाला की होली

इनके अलावा हिन्दी की सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ, विचारोत्तेजक लेख और समालोचनाएँ लगातार प्रकाशित।

संप्रति : हिन्दी प्राध्यापक : बी० डी० कालेज, मीठापुर, पटना

निवास : हनुमान नगर, शास्त्री नगर, पटना–800 023